अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष- 43, अंक- 09, 16-31 दिसंबर 2019

लगातार बुरे दौर से गुजर रही भारत की अर्थव्यवस्था को लेकर चौंकाने वाले आंकड़े सामने आए हैं। आधिकारिक आंकड़ों के मुताबिक, भारत की अर्थव्यवस्था में जुलाई से सितंबर के बीच देश का सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी महज 4.5 प्रतिशत ही रह गयी है। यह आंकड़ा बीते 6 सालों में सबसे निचले स्तर पर है। पिछली तिमाही की भारत की जीडीपी भी महज 5 प्रतिशत ही रही थी। यह भयावह स्थिति है। ये आंकड़े दिखाते हैं कि देश की अर्थव्यवस्था चरमरा गयी है। अगर जीडीपी के आंकड़ों को अलग-अलग करके देखें तो ताजा विकास दर 4.5 प्रतिशत भी इसलिए दिख रही है, क्योंकि सरकारी खर्च 15.6 प्रतिशत बढ़ा है। अगर इस खर्च को अलग रख के गणना करें तो पायेंगे कि स्थिति और भी ज्यादा बुरी है, ऐसे में भारतीय अर्थव्यवस्था की वर्तमान विकास दर 3 प्रतिशत ही रह जायेगी। और अब तो रिजर्व बैंक ने भी अपनी मौद्रिक नीति समीक्षा में यह स्वीकार किया है कि वित्त वर्ष 2019-20 की समग्र विकास दर का अनुमानित आंकड़ा 5 प्रतिशत ही रहने वाला है। माह अक्टूबर में यह अनुमान 6.1 प्रतिशत तक आंका गया था।

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 43, अक : 09, 16-31 दिसंबर 2019

अध्यक्ष
महादेव विद्रोही

संपादक
बिमल कुमार
सहसंपादक
प्रेम प्रकाश
09453219994
संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'
प्रो. सोमनाथ रोडे अरविन्द अंजुम,
रमेश ओझा अशोक मोती

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

एक प्रति	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC Code : UBIN0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. संपादकीय... 2
2. इन्हें क्षमा करें, ये गांधी को नहीं जानते... 3
3. राहुल बजाज : बुलंद भारत की... 5
4. जीडीपी : छः साल में सबसे खराब हालत... 7
5. मूडीज ने भारत की अर्थव्यवस्था की... 8
6. जीडीपी में गिरावट रोकने का कोई... 9
7. शहरों में पहुंच रहा है ग्रामीण भारत का... 10
8. गिरती जीडीपी से आम आदमी को क्या... 11
9. श्रद्धांजलियां... 12
10. कितनी आजाद है ग्रामीण पत्रकारों की... 13
11. धारावाहिक - 'बा'... 16
12. लोक-विमर्श... 18
13. कविताएं... 19
14. धर्मों की फुलवारी... 20

संपादकीय

नफरत की विचारधारा के ध्वजवाहक

क्या नाथूराम गोडसे अकेला था? क्या उसके साथ एक षड्यंत्रकारी गिरोह नहीं था? क्या यह गिरोह एक विचारधारा के शीर्ष नेतृत्व द्वारा पोषित नहीं था? आज जब प्रज्ञा ठाकुर कह रही है कि गोडसे देशभक्त था, तो यही सवाल मन में गूंज रहे हैं। क्या प्रज्ञा ठाकुर अकेली हैं? क्या उनके साथ षड्यंत्रकारी गिरोह नहीं है? क्या यह गिरोह एक विचारधारा के शीर्ष नेतृत्व द्वारा पोषित नहीं है? एक निरंतरता है-नफरतवादी-उग्र संप्रदायवादी-हिन्दुत्व की विचारधारा और उसकी कार्यशैली में।

गांधीजी की हत्या के अतिरिक्त गोडसे ने और कौन-सा उल्लेखनीय कार्य किया, जिस कारण वह विचारधारा आज भी गोडसे को महिमामंडित करना चाहती है? यानि सच्चाई यही है कि वह हत्या गांधीजी की विचारधारा को खत्म करने के लिए की गयी थी। और आज भी गोडसे का महिमामंडन गांधीजी की विचारधारा को खत्म करने के लिए ही किया जा रहा है।

एक बात और स्पष्ट होनी चाहिए। कुछ धूर्त लोग यह भ्रम फैलाने की कोशिश करते हैं कि गोडसे जिस विचारधारा को मानता था, वह विचारधारा तो सही थी, किन्तु हत्या गलत थी। सच्चाई यह है कि हत्या की रणनीति उस विचारधारा का अभिन्न अंग है। पानसरे, कलबुर्गी, गौरी लंकेश जैसे व्यक्तियों की हत्या और मॉब लिंचिंग आदि उसी रणनीति का हिस्सा है। नफरतवादी-उग्र सम्प्रदायवादी-हिन्दुत्व को अपने अस्तित्व में आने के बाद से ८० वर्षों तक एक प्रतिशत हिन्दुओं का भी समर्थन प्राप्त नहीं था, इसलिए ऐसी कार्यवाई उनकी रणनीति का हिस्सा होती थी, जिससे धमाका हो सके, भरपूर प्रचार किया जा सके तथा उनके समर्थकों का आधार बढ़ाया जा सके।

नफरतवादी-उग्र सम्प्रदायवादी और हिन्दुत्ववादी शक्तियों द्वारा गांधीजी की हत्या के ६ प्रयास किये गये, जिनमें चार आजादी प्राप्ति के पूर्व—सन् १९३४ में, दो बार १९४४ में व १९४६ में किये गये। नाथूराम गोडसे, सन् १९३४ से ही उनकी हत्या के षड्यंत्रों में शामिल था। गोडसे विचारधारा से जुड़ा था, इसका प्रमाण यह है कि "गांधी हत्या में नाथूराम के सहयोगी और उसके भाई गोपाल गोडसे ने लिखा कि नाथूराम की निष्ठा से प्रभावित होकर सावरकर ने उसे अपना सेक्रेटरी बना लिया था। नाथूराम आर. एस. एस. से भी जुड़ा था। बाद में उसे संघ की एक शाखा के 'शैक्षणिक विभाग' का प्रधान भी नियुक्त किया गया।" *(देखें गांधी मार्ग, मई-जून २०१९)*

वैचारिक स्तर पर गांधीजी के विरोध के तीन प्रमुख कारण थे। एक, गांधीजी औपनिवेशिक शासन और उसके पीछे छिपे पूंजीवाद का विरोध करते थे। दूसरा, भारत में वे सर्वधर्म समभाव वाले समाज का निर्माण करना चाहते थे। तथा तीसरा, वे हरिजनों को बराबर का अधिकार देने के लिए लड़ रहे थे व जाति प्रथा का उन्मूलन करना चाहते थे।

गोडसे जिस विचारधारा को मानता था, उस विचारधारा के लोग अंग्रेजी शासकों के समर्थक थे तथा जमींदारों, देशी रजवाड़ों व वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था के पक्षधर थे। अंग्रेजी शासकों के हिमायती होने के कारण ही, जब अंग्रेज शासकों ने चाहा कि वे मुस्लिम लीग के साथ मिलकर सरकार बनायें तो उन्होंने ४ प्रांतों में मुस्लिम लीग के साथ मिलकर सरकार बनायी। जब अंग्रेजी शासक फूट डालो व राज करो की नीति पर अमल करते, तब ये मुसलमानों का उग्र विरोध शुरू कर देते थे। उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन का विरोध किया। यहां तक कि जब नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज भारत की ओर बढ़ रही थी, तो इन लोगों ने भारतीय (विशेषकर बंगाली) युवकों का आह्वान किया कि वे अंग्रेजी फौज में शामिल हों और आजाद हिन्द फौज का भी मुकाबला करें। आज भी इस विचारधारा के लोग वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था के पक्ष में खड़े हैं तथा भारत के प्राकृतिक संसाधनों, खेती व अन्य उत्पादन क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का नियंत्रण बढ़े, इसके पक्षधर हैं।

गांधीजी के विरोध का दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण यह था कि गांधीजी सर्वधर्म समभाव के हिमायती थे तथा राष्ट्र निर्माण के लिए इसे आवश्यक मानते थे। गोडसे जिस विचारधारा का था, वह बहुलतावादी संस्कृति के विरोध में खड़ी थी। आज भी यह विचारधारा बहुलतावादी संस्कृति की विरोधी है। गांधी का हिन्दुत्व व राम के प्रति उनकी आस्था, उन्हें सर्वसमावेशी बनाती थी, जो इन्हें स्वीकार्य नहीं था।

और तीसरे, जब गांधीजी ने हरिजनों को समान अधिकार दिलाने का अभियान शुरू किया, जिसके मूल में जाति प्रथा का उन्मूलन निहित था, तो इन शक्तियों ने देशभर में गांधीजी का उग्र व हिंसक विरोध किया। गोडसे को देशभक्त बताने वाले आज भी वही लोग हैं, और उनकी गोडसे के प्रति इस 'निष्ठा' को इन्हीं संदर्भों में समझने की जरूरत है।

–बिमल कुमार

इन्हे क्षमा करें, ये गांधी को नहीं जानते

❑ अरुण तिवारी

हालांकि मैं गांधी जी को न ठीक से जानता हूं और न ही उनका अनुयायी हूं; किंतु प्रज्ञा ठाकुर के बयान के बाद, मैं दो दिनों तक गांधी जी को पढता रहा। दो दिन के अध्ययन के बाद एक बात मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि मेरी तरह प्रज्ञा ठाकुर भी गांधी को ठीक से नहीं जानती। मैं आश्चर्य चकित हूं। मुझे लगने लगा है कि यदि मैं गांधी जी को जानने की प्रक्रिया को जारी रख सका, तो एक दिन उन्हें मानने भी लगूंगा। जो जानता नहीं, वह मान कैसे सकता है? उसके अनुयायी होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। खैर, मैं आभारी हूं प्रज्ञा ठाकुर के साथ-साथ प्राची, अरुंधति और काटजू साहब का, जिन्होने अपने-अपने अंदाज में अलग-अलग समय में गांधी को नकारने की हिमाकत की और मेरे जैसों को गांधी के योगदान को जानने का एक माकूल मौका मुहैया कराया।

इन्हे क्षमा कर दें : गौर करने की बात है कि वर्ष-2019 गांधीजी की जन्म तिथि का 150 वां वर्ष है। इस पावन मौके पर आत्ममंथन के बजाय, भारत में गांधी के लिए गंदे बोल और उनके हत्यारे नाथूराम गोडसे को शहीद घोषित करने की नापाक कोशिशें हो रही हैं। यह अनजाने में किया गया कृत्य नहीं है। ऐसे में हमारे पास दो मार्ग हैं, पहला, कि गांधी को गाली देने वालों की बात ही न करें; चुप्पी साध लें और दूसरा कि चुप्पी तोड़ दें। महात्मा गांधी को गाली देने वालों के बारे में फिलहाल मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूं कि आप इन्हे क्षमा कर दें, क्योंकि ये गांधी जी को ठीक से नहीं जानते। सच पूछें तो आज ऐसे लोगों को ही गांधी जी की सबसे ज्यादा जरूरत है। कहना न होगा कि प्रज्ञा ठाकुर ने जिन शब्दों में गांधी के योगदान को नकारने की कोशिश की और एक वक्त में काटजू साहब ने जिस तर्कहीन तर्ज पर गांधी की देशभक्ति को कटघरे में खड़ा किया था, मुझे यह लिखने में कोई गुरेज नहीं कि दोनों ने क्रमशः अपने-अपने नाम के आगे लगे साध्वी और न्यायमूर्ति जैसे पवित्र शब्दों का अपमान किया। राष्ट्रपिता पर आक्षेप लगाकर, अपनी राष्ट्रवादिता पर ही प्रश्न चिन्ह लगाया। याद कीजिए कि अंरुधति रॉय ने भी गांधी जी को 'कॉर्पोरेट प्रायोजित प्रथम एनजीओ' का तमगा दे डाला था। आज गांधी जी जिंदा होते, तो सबसे पहले ऐसे लोगों की शुचिता और स्वास्थ्य की सेवा करने में जुट जाते।

मंथन पर प्रतिबंध कहां? : अरुंधति ने व्यक्तिगत अंधभक्ति को गलत ठहराया था। इस बारे में महात्मा गांधी का विचार भिन्न कहां है? उन्हें समझना होगा कि महात्मा गांधी एक व्यक्ति न होकर, एक विचार, व्यवहार और जीवन शैली का नाम है। गांधी प्रतीक है, सादगी, सत्य, अहिंसा तथा व्यवहार और विचार में साम्य का। जो गांधी, व्यक्तिवादिता से परहेज करने की स्वयं वकालत करता रहा हो, व्यक्तिगत अंधभक्ति करने वाले भला उनके अनुयायी कैसे हो सकते हैं? गौर करने की बात है कि इस दुनिया में महान विचारक और भी बहुत हुए, किंतु महात्मा गांधी भिन्न इसीलिए थे कि उन्होंने दूसरे से जो कुछ भी अपेक्षा की, उसे पहले अपने जीवन में लागू किया। गांधी विचार पर चिंतन, मंथन, बहस और मानने, न मानने पर प्रतिबंध कहां हैं?

इस दुनिया में महान विचारक और भी बहुत हुए, किंतु महात्मा गांधी भिन्न इसीलिए थे कि उन्होने दूसरे से जो कुछ भी अपेक्षा की, उसे पहले अपने जीवन में लागू किया। महात्मा गांधी की इसी खूबी ने उनके जन्म के 150 वर्षों बाद भी उन्हें जीवित रखा है। हकीकत यही है जब तक दुनिया में झूठ और अनाचार रहेगा, गांधीजी दुनिया के दिलों की कालिख साफ करते रहेंगे। उनका स्वच्छता अभियान जारी रहेगा। उन्हे मिटाना संभव नहीं होगा।

गांधी को जानना जरूरी : ध्यान रहे कि 1915 में दक्षिण अफ्रीका से वापस अपने देश लौटने वाला गांधी, 1893 में एक व्यापारिक प्रतिष्ठान में नौकरी करने गया मोहनदास कर्मचंद गांधी नामक एक वकील मात्र नहीं था। 1915 को भारत लौटा गांधी, एक ऐसा गांधी था, जो अपने दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान ही यह बात एक सिद्धांत की तरह स्थापित कर चुका था कि शांतिपूर्ण तरीके से सत्य का आग्रह करके भी न्याय हासिल किया जा सकता है। उस गांधी ने अहिंसा को सुरक्षा के सबसे भरोसेमंद, व्यावहारिक और अचूक अस्त्र के रूप में पा लिया था। वह एक ऐसा गांधी भी था, जो निजी स्तर पर हुए अन्याय का इस्तेमाल, सर्वजन को न्याय दिलाने में करना जानता था; जिसने भारत आने पर सबसे पहले उस हिंदुस्तान को जानने की कोशिश की, जिसे जानना तो दूर, आज के अधिकांश राजनेता पहचानते भी नहीं हैं। गांधी ने उसे पहचान कर ही तय किया था कि आज़ादी नीचे से शुरू होनी चाहिए। उन्होने यंग इंडिया में लिखा भी है - ''मेरे सपनों का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा।''

चेतना को नकारने का काम : महात्मा गांधी ने किसान को जगतपिता कहा। ऐसे गांधी को नकारकर क्या राष्ट्र, किसानों के प्रति उस आस्था को नकारने को तैयार है, जो सिर्फ महात्मा गांधी की नहीं, भारतीय संस्कृति की भी मौलिक आस्था है? मेरे ख्याल से गांधी के सूत और तकली को नकारना, तो अंतिम जन की उस पूरी चेतना को ही नकार देना है, कभी चरखा, जिसके उत्थान का औजार बनकर सबसे आगे दिखा करता था।

गुरेज करने लायक नहीं गांधी का सपना : कौन नहीं जानता कि गांधी ने आजादी के लिए संघर्ष करते-करते हरिजनों के आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक अधिकार के लिए भी सतत् संघर्ष किया ? अपने सपनों के भारत का

सपना संजोते वक्त गांधी लिखते हैं - ''मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करुंगा, जिसमें गरीब से गरीब आदमी भी यह महसूस कर सके कि यह उसका देश है, जिसके निर्माण में उसका महत्व है। मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें ऊंच और नीच का कोई भेद न हो और सब जातियां मिल-जुल कर रहती हों। ऐसे भारत में अस्पृश्यता व शराब तथा नशीली चीजों के अनिष्टों के लिए कोई स्थान न होगा। उसमें स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार होंगे। सारी दुनिया से हमारा सम्बन्ध शांति और भाई चारे का होगा।'' क्या गांधी का यह सपना गुरेज करने लायक है?

रचनात्मक कार्यक्रमों के केन्द्र में अंतिम जन : आखिरकार, कोई कैसे भूल सकता है कि गांधी जी ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम में ही अपने योगदान का एक अलग पन्ना नहीं लिखा, बल्कि भारत की गरीब-गुरबा और कमजोर आबादी के उत्थान का भी एक नया ककहरा लिखकर दिखाया? पूंजी की गुलामी की ललक में हम सभी ने बहुत कुछ खो दिया है; बावजूद इसके यदि हम गांधी के सूत, तकली से लेकर उनके विचार और उनके तमाम रचनात्मक कार्यक्रमों पर गौर करें, तो पायेंगे कि अपने हाथ के काते को बुनने और पहनने का मूल विचार, अंतिम जन के हित का ही दर्शन शास्त्र था।

भिन्न नहीं गांधी और भारत का दर्शन शास्त्र : गांधी दर्शन के बारे में प्रज्ञा ठाकुर को एक और बात जानना जरूरी है कि गांधी दर्शन, हिंदू धर्म के मूल दर्शन से अलग नहीं है। गांधी ने कई औरों से भिन्न सिर्फ यह किया कि भारत के मौलिक ज्ञान और आस्था को कर्म मार्ग में उतार दिया। क्या गलत किया? ऐसा करने वाले को आप अंग्रेजों का एजेंट कहेंगे या मूल भारतीय संस्कृति का वाहक? आप तय करें।

गांधी से प्रेरित विश्व : संयुक्त राष्ट्र महासभा जैसी दुनिया की सर्वोच्च संस्था ने भारत जैसे गरीब राष्ट्र के राष्ट्रपिता के जन्म दिवस को 'अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस' के रूप में प्रतिवर्ष मनाने का फैसला यूं ही नहीं लिया था। यदि गांधी विचार में कहीं खोट होता, तो गांधी मार्ग पर चलने वाले नेल्सन मंडेला, आर्क बिशप डेसमंड टुटु और आंग सां सू की जैसे लोग आधुनिक विश्व के सर्वोच्च सम्मानों से सम्मानित न किए जाते। गांधी टोपी वाले अन्ना के आंदोलन के ज्वार में आधुनिक युवा एक नहीं होता। कोई कैसे नकार सकता है कि दलितों को अधिकार दिलाने के लिए बाबा साहेब अंबेडकर का सत्याग्रह, विनोबा का भूदान, जेपी की संपूर्ण क्रांति, चिपको आंदोलन, टिहरी में सुंदरलाल बहुगुणा का हिमालय बचाओ, मेधा का नर्मदा बचाओ, राजेन्द्र सिंह का यमुना सत्याग्रह, म. प्र. का जल-सत्याग्रह, संत गोपालदास का गो अनशन, प्रो जी डी अग्रवाल और स्वामी निगमानंद के गंगा अनशन, भू-अधिकार का ताजा एजेंडा, गांधी मार्ग पर चलकर ही चेतना और चुनौती के पर्याय बन सके। प्रज्ञा, प्राची, अरुंधति रॉय या काटजू साहब को याद कर लेना चाहिए कि यह गांधीजी ही थे, जो मानते थे कि राष्ट्रीय कांग्रेस, सिर्फ हिंदुस्तान की आजादी हेतु साधन और सामर्थ्य जुटाने का साधन भर थी।

रास्ता दिखाता गांधी विचार : ''मेरी समझ में राजनीतिक सत्ता अपने आप में साध्य नहीं है। वह जीवन के प्रत्येक विभाग में लोगों के लिए अपनी हालत सुधारने का साधन है।...राष्ट्रीय प्रतिनिधि यदि आत्मनियमन कर लें, तो फिर किसी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं रह जाती।'' जब गांधी यह कहते हैं या थोरो के उस कथन का उल्लेख करते हैं, जिसमें कहा गया है कि जो सबसे कम शासन करे, वही सबसे उत्तम सरकार है, तो क्या आपको जातिवादी राजनीति, बढ़ती मसल पावर और मनी पावर जैसी सबसे चिंतित करने वाली चुनौतियों को उत्तर देने की ताकत स्पष्ट दिखाई नहीं देती? यहां सबसे कम का तात्पर्य सबसे कम समय न होकर, सरकार में जनता को शासित करने की मंशा का सबसे न्यून होना है। मैं साफ देख रहा हूं कि गांधी के बुनियादी चिंतन को व्यवहार में उतारने मात्र से बलात्कार की उग्र होती प्रवृति से मुक्ति से लेकर वैश्विक नवसाम्राज्यवाद के पुराने चक्रव्यूह में फंस चुके भारत की आर्थिक आजादी तक स्वयंमेव सुरक्षित और सुनिश्चित हो जायेगी।

गांधीजी शुद्ध स्वदेशी को परमार्थ की पराकाष्ठा मानते हुए एक ऐसी भावना के रूप में व्यक्त करते हैं, जो हमें अपने सीमावर्ती परिवेश का ही उपयोग करना सिखाती है। गांधी जी कहते थे कि भारत की जनता की अधिकांश गरीबी का कारण यह है कि आर्थिक और औद्योगिक जीवन में हमने स्वदेशी के नियम को भंग किया। दुर्भाग्यपूर्ण है कि आज हम फिर वही नीतिगत गलतियां कर रहे हैं।

इन समस्याओं का समाधान व्यवस्था या राजनीति में नहीं, पंचायतों तथा मोहल्ला समितियों के रूप में गठित बुनियादी लोक इकाइयों से लेकर हमारे निजी चरित्र में आयी गिरावटों में खोजने की जरूरत है। चरित्र निर्माण, गांधी मार्ग का भी मूलाधार है और विवेकानंद द्वारा युवाशक्ति के आह्वान् का भी। लोकतंत्र से बेहतर कोई तंत्र नहीं होता। सदाचारी होने पर यही नेता, अफसर और जनता तथा यही व्यवस्था सर्वश्रेष्ठ में तब्दील हो जायेगी। माता-पिता और शिक्षक, मूलतः इन तीन पर चरित्र निर्माण का दायित्व है।

हे राम!! बापू ने मृत्यु पूर्व यही कहा था। बेहतर हो कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम और उनकी कृपा को मूर्ति में ढूंढने वाले, उन्हे चरित्र निर्माण की दायित्व पूर्ति में ढूंढे। यही गांधी दर्शन भी है और भारत का सदियों के अनुभवों से जांचा-परखा राष्ट्र दर्शन भी। ❑

सर्वोदय जगत की विशेष प्रस्तुति

सर्वोदय जगत के जनवरी माह के दोनों अंकों में एक विशेष लेख शृंखला का प्रकाशन होगा। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के बारे में प्रचलित तमाम गलतफहमियों का स्पष्टीकरण किया है, सर्वोदय परिवार के हमारे बुजुर्ग स्व. नारायण भाई देसाई ने। नारायण भाई बापू के सचिव महादेव भाई देसाई के सुपुत्र थे, जिन्हें बापू बाबला कहकर बुलाते थे। दोनों अंकों में क्रमशः प्रकाशित होने वाली यह लेख शृंखला उन्होंने मूल रूप से गुजराती में लिखी थी, जिसका हिन्दी अनुवाद सर्वोदय जगत के पाठकों के लिए विशेष रूप से प्रकाशित किया जा रहा है। **–सं.**

राहुल बजाज
बुलंद भारत की बुलंद तस्वीर

❑ प्रशांत चाहल

'लोग (उद्योगपति) आपसे (मोदी सरकार) डरते हैं. जब यूपीए-2 की सरकार थी, तो हम किसी की भी आलोचना कर सकते थे. पर अब हमें यह विश्वास नहीं है कि अगर हम खुले तौर पर आलोचना करें तो आप इसे पसंद करेंगे.'

भारत के कुछ नामी उद्योगपतियों में से एक और बजाज समूह के प्रमुख राहुल बजाज गृहमंत्री अमित शाह के सामने सार्वजनिक रूप से यह बात कहने की वजह से चर्चा में हैं. सोशल और मुख्यधारा की मीडिया में 81 वर्षीय राहुल बजाज के बारे में काफ़ी कुछ लिखा जा रहा है. एक तरफ वे लोग हैं, जो उनकी प्रशंसा कर रहे हैं और कह रहे हैं कि एक उद्योगपति ने सरकार के खिलाफ़ बोलने की हिम्मत दिखाई और हक़ीक़त को सबके सामने ला दिया है. जबकि दूसरी ओर वो लोग हैं, जो उनके बयान को राजनीति से प्रेरित मान रहे हैं और उन्हें 'कांग्रेस-प्रेमी' बता रहे हैं.

सोशल मीडिया पर राहुल बजाज के कुछ वीडियो भी शेयर किये जा रहे हैं, जिनमें वे जवाहरलाल नेहरू को अपना पसंदीदा प्रधानमंत्री बताते हैं और पूर्व कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी की तारीफ़ करते दिखाई देते हैं. लेकिन दक्षिणपंथी विचारधारा वाली बीजेपी सरकार के जो समर्थक इन वीडियोज के आधार पर राहुल बजाज को कांग्रेसी बता रहे हैं, वे ये भूल रहे हैं कि बीजेपी, एनसीपी और शिवसेना के समर्थन से ही वर्ष 2006 में राहुल बजाज निर्दलीय के तौर पर राज्यसभा मेंबर चुने गए थे. उन्होंने अविनाश पांडेय को सौ से अधिक वोटों से हराकर संसद में अपनी सीट हासिल की थी और अविनाश पांडेय कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार थे.

जब राहुल बजाज ने देश की आर्थिक स्थिति को लेकर उद्योगपतियों की चिंताओं और उनके कथित भय पर टिप्पणी की तो अमित शाह ने उसके जवाब में कहा कि 'किसी को डरने की ज़रूरत नहीं है और न ही कोई डराना चाहता है'. मगर सवाल है कि क्या बीजेपी के समर्थकों ने राहुल बजाज की आलोचनात्मक टिप्पणी पर 'हल्ला मचाकर' गृहमंत्री की बात को हल्का नहीं कर दिया है?

इसके जवाब में वरिष्ठ पत्रकार टी के अरुण ने कहा कि 'ये एक नया ट्रेंड बन चुका है. आलोचना के पीछे की भावना नहीं देखी जा रही है, सिर्फ उन आवाज़ों के खिलाफ़ हंगामा किया जा रहा है. राहुल बजाज ने जो टिप्पणी की है, वह इसलिए अहम है क्योंकि किसी ने कुछ बोला तो सही. वरना सीआईआई की बंद

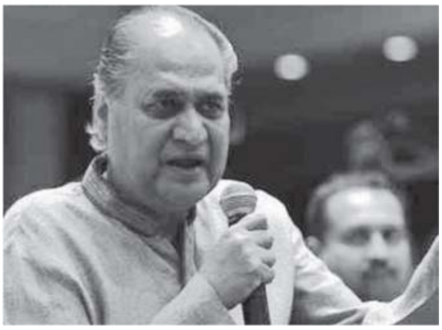

कमरे वाली बैठकों में उद्योगपति जो चिताएं बीते कुछ वक्त से ज़ाहिर कर रहे हैं, उनके बारे में वे खुलकर बात करने से बचते हैं. टी के अरुण को लगता है कि बजाज का ये बयान किसी एक पार्टी के खिलाफ़ नहीं है, बल्कि वे पहले भी ऐसे बयान देकर सुर्खियाँ बटोर चुके हैं.

महात्मा गांधी के 'पाँचवें पुत्र'

जून 1938 में जन्मे राहुल बजाज भारत के उन चुनिंदा औद्योगिक घरानों में से एक परिवार से वास्ता रखते हैं, जिनकी भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू से काफ़ी घनिष्ठता रही. उनके दादा जमनालाल बजाज ने 1920 के दशक में 20 से अधिक कंपनियों वाले 'बजाज कंपनी समूह' की स्थापना की थी. सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध सूचनाओं के अनुसार राजस्थान के मारवाड़ी समुदाय से आने वाले जमनालाल को उनके एक दूर के रिश्तेदार ने गोद लिया था. ये परिवार महाराष्ट्र के वर्धा में रहता था, इसलिए वर्धा से ही जमनालाल ने अपने व्यापार को चलाया और बढ़ाया. बाद में वे महात्मा गांधी के संपर्क में आये और उनके आश्रम के लिए उन्होंने सेगांव में जमीन भी दान की.

जमनालाल बजाज के पाँच बच्चे थे. कमलनयन उनके सबसे बड़े पुत्र थे. फिर तीन बहनों के बाद रामकृष्ण बजाज उनके छोटे बेटे थे. राहुल बजाज, कमलनयन बजाज के बड़े पुत्र हैं और राहुल के दोनों बेटे, राजीव और संजीव, मौजूदा समय में बजाज ग्रुप की कुछ बड़ी कंपनियों को संभालते हैं. कुछ अन्य कंपनियों को राहुल बजाज के छोटे भाई और उनके चचेरे भाई संभालते हैं. बजाज परिवार को क़रीब से जानने वाले कहते हैं कि जमनालाल बजाज को महात्मा गांधी का 'पाँचवा पुत्र' भी कहा जाता था. इसी वजह से नेहरू भी उनका सम्मान करते थे.

गांधी परिवार और बजाज परिवार का किस्सा

गांधी परिवार और बजाज परिवार के बीच नज़दीकियों को समझाने के लिए एक किस्सा कई बार सुनाया जाता है. ये चर्चित किस्सा यूँ है कि जब राहुल बजाज का जन्म हुआ तो इंदिरा गांधी कांग्रेस नेता कमलनयन बजाज (राहुल के पिता) के घर पहुँची और उनकी पत्नी से शिक़ायत की कि उन्होंने उनकी एक क़ीमती चीज़ ले ली है. ये था नाम 'राहुल' जो जवाहर लाल नेहरू को बहुत पसंद था और उन्होंने इसे इंदिरा के बेटे के लिए सोच रखा था. लेकिन नेहरू ने यह नाम अपने सामने जनमे कमलनयन बजाज के बेटे को दे दिया. कहा जाता है कि बाद में इंदिरा गांधी ने राजीव गांधी के बेटे का नाम राहुल इसी वजह से रखा था कि ये नाम उनके पिता को बहुत पसंद था.

बहरहाल, 1920 के दशक में जिनके 'स्वतंत्रता-सेनानी' दादा ने पूरे परिवार समेत खादी अपनाने के लिए विदेशी कपड़ों को आग लगा दी, उनका पोता कैसे आज़ाद भारत में पूंजीवाद के चर्चित चेहरों में से एक बन पाया! ये कहानी भी दिलचस्प है.

'लाइसेंस राज' में बजाज

अपने पिता कमलनयन बजाज की तरह राहुल बजाज ने भी विदेश से पढ़ाई की. दिल्ली विश्वविद्यालय के सेंट स्टीफ़न कॉलेज से इकोनॉमिक ऑनर्स करने के बाद राहुल बजाज ने क़रीब तीन साल तक बजाज इलेक्ट्रिकल्स कंपनी में ट्रेनिंग की. इसी दौरान उन्होंने बॉम्बे यूनिवर्सिटी से वक़ालत की पढ़ाई भी की. राहुल बजाज ने 60 के दशक में अमरीका के हार्वर्ड बिज़नेस स्कूल से एमबीए की डिग्री ली थी. पढ़ाई पूरी करने के बाद वर्ष 1968 में 30 वर्ष की उम्र में जब राहुल बजाज ने 'बजाज ऑटो लिमिटेड' के सीईओ का पद संभाला तो कहा गया कि ये मुक़ाम हासिल करने वाले वे सबसे युवा भारतीय हैं.

उस दौर को याद करते हुए अर्थशास्त्री मोहन गुरुस्वामी कहते हैं कि जब राहुल बजाज के हाथों में कंपनी की कमान आई तब देश में 'लाइसेंस राज' था, यानी देश में ऐसी नीतियां लागू थीं, जिनके अनुसार बिना सरकार की मर्जी के उद्योगपति कुछ नहीं कर सकते थे. ये व्यापारियों के लिए मुश्किल परिस्थिति थी. उत्पादन की सीमाएं तय थीं. उद्योगपति चाहकर भी माँग के अनुसार पूर्ति नहीं कर सकते थे. उस दौर में ऐसी कहानियाँ चलती थीं कि किसी ने स्कूटर बुक करवाया तो डिलीवरी कई साल बाद मिली. यानी जिन परिस्थितियों में अन्य निर्माताओं के लिए काम करना मुश्किल था, उन्हीं परिस्थितियों में बजाज ने बेहतर तरीक़े से उत्पादन किया और खुद को देश की सबसे बड़ी कंपनियों में से एक बनाने में सफलता हासिल की.

हालांकि बीते दो दशकों में राहुल बजाज ने जो भी बड़े इंटरव्यू दिए हैं, उनमें लाइसेंस राज को एक ग़लत व्यवस्था बताते हुए उन्होंने उसकी आलोचना ही की है. वे ये दावा करते आए हैं कि बजाज चेतक (स्कूटर) और फिर बजाज पल्सर (मोटरसाइकिल) जैसे उत्पादों ने बाज़ार में उनके ब्रांड की विश्वसनीयता को बढ़ाया और इसी वजह से कंपनी 1965 में तीन करोड़ के टर्नओवर से 2008 में क़रीब दस हज़ार करोड़ के टर्नओवर तक पहुंच पाई.

बयान का कुछ असर होगा?

राहुल बजाज ने अपने जीवन में जो मुक़ाम हासिल किये हैं, उनका श्रेय वे अपनी पत्नी रूपा घोलप को भी देते हैं. वरिष्ठ पत्रकार करण थापर को वर्ष 2016 में दिए एक इंटरव्यू में राहुल बजाज ने कहा था कि 1961 में जब रूपा और मेरी शादी हुई तो भारत के पूरे मारवाड़ी-राजस्थानी उद्योगपति घरानों में वह पहली लव-मैरिज थी. रूपा महाराष्ट्र की ब्राह्मण थीं. उनके पिता सिविल सर्वेंट थे और हमारा व्यापारी परिवार था तो दोनों परिवारों में तालमेल बैठाना थोड़ा मुश्किल था. पर मैं रूपा का बहुत सम्मान करता हूँ, क्योंकि उनसे मुझे काफ़ी कुछ सीखने को मिला.

अर्थशास्त्री मोहन गुरुस्वामी कहते हैं कि भारतीय उद्योगपतियों को मनमाने ढंग से व्यापार करने की आदतें लगी हुई हैं. भारत में छूट लेकर विदेशों में निवेश करना, नया ढर्रा बन चुका है. लोग कर्ज लौटाने को लेकर ईमानदार नहीं हैं. कुछ कानून सख़्त किये गए हैं तो उन्हें डर का नाम दिया जा रहा है. जबकि डर की बात करने वाले वही लोग हैं, जिन्होंने करोड़ों रुपये की फंडिंग देकर ये सरकार बनवाई है. बीजेपी ने चुनाव आयोग को बताया तो है कि कॉरपोरेट ने चुनाव में उन्हें कितना फंड दिया. लेकिन ये लोग कभी नहीं कहते कि डोनेशन के लिए हमें डराया जा रहा है क्योंकि उस समय ये लोग अपने लिए 'संरक्षण' और सरकार में दखल रखने की उम्मीदें ख़रीद रहे थे. गुरुस्वामी कहते हैं कि लगातार गिर रहे जीडीपी के नंबरों और अर्थव्यवस्था में सुस्ती को आधार बनाकर उद्योगपति पहले ही सरकार से कॉर्पोरेट टैक्स में छूट ले चुके हैं. हो सकता है कि बजाज जिस डर का जिक्र कर रहे हैं, उसे आधार बनाकर उद्योगपति फिलहाल बैकफुट पर चल रही सरकार से किसी नई रियायत की माँग करें.

राहुल बजाज न सिर्फ एक बार राज्यसभा के सांसद रह चुके हैं, बल्कि भारतीय उद्योग परिसंघ यानी सीआईआई के अध्यक्ष भी रहे हैं, सोसायटी ऑफ़ इंडियन ऑटोमोबाइल मैन्युफ़ैक्चरर्स के अध्यक्ष रहे हैं, इंडियन एयरलाइंस के चेयरमैन रह चुके हैं और भारत का तीसरा सबसे बड़ा नागरिक सम्मान 'पद्मभूषण' प्राप्त कर चुके हैं. उनके इसी अनुभव का हवाला देते हुए वरिष्ठ पत्रकार टी के अरुण कहते हैं कि राहुल बजाज की बातों का एक वज़न है, जिसे यूँ ही दरकिनार नहीं किया जा सकता. वे बताते हैं कि 1992-94 में हुए इंडस्ट्री रिफ़ॉर्म के खिलाफ़ भी राहुल बजाज खुलकर बोले थे. उनका तर्क था कि इससे भारतीय इंडस्ट्री को धक्का लगेगा और देसी कंपनियों के लिए प्रतिस्पर्धा मुश्किल हो जाएगी. राहुल बजाज ने भारतीय उद्योगपतियों की तरफ से यह बात उठाई थी कि विदेशी कंपनियों को भारत में खुला व्यापार करने देने से पहले देसी कंपनियों को भी बराबर की सुविधाएं और वैसा ही माहौल दिया जाए ताकि विदेशी कंपनियाँ भारतीय कंपनियों के लिए ख़तरा ना बन सकें. हालांकि टी के अरुण कहते हैं कि उस वक्त भी सरकार से बैर न लेने के चक्कर में कम ही उद्योगपति इस पर खुलकर बोल रहे थे और इस बार भी राहुल बजाज का बयान कम ही लोगों में बोलने की हिम्मत डाल पाएगा.

पीएम मोदी से थीं उम्मीदें!

साल 2014 में जब नरेंद्र दामोदर दास मोदी ने भारत के प्रधानमंत्री पद की शपथ ली थी, तब राहुल बजाज ने कहा था कि उन्हें पीएम मोदी से काफ़ी उम्मीदें हैं क्योंकि यूपीए-2 एक बड़ी असफलता रहा और जिसके बाद मोदी के पास करने को बहुत कुछ होगा. लेकिन पाँच साल के भीतर राहुल बजाज की यह सोच बदल गयी. ❑

जीडीपी

छः साल में सबसे ख़राब हालत में अर्थव्यवस्था

❑ आलोक जोशी

पिछली तिमाही की जीडीपी ग्रोथ का आंकड़ा आ गया है. आशंकाएं सच साबित हुई हैं. जीडीपी ग्रोथ की दर गिरकर साढ़े चार प्रतिशत पर आ गई है. कुछ ही समय पहले समाचार एजेंसी रॉयटर्स ने अर्थशास्त्रियों का सर्वेक्षण किया था, जिसमें ये दर गिरकर पांच प्रतिशत से नीचे आने की आशंका जताई गई थी. लेकिन उन्होंने भी आंकड़ा 4.7 प्रतिशत तक रहने की आशंका जताई थी. अब जो आंकड़ा आया है, वह इस आशंका से भी ख़राब है. पिछले छह साल में सबसे ख़राब आंकड़ा है ये, इससे पहले 2013 में जनवरी से मार्च के बीच ये दर 4.3 प्रशित पर थी.

चिंता की बात ये है कि ये लगातार छठी तिमाही है, जब जीडीपी के बढ़ने की दर में गिरावट आई है. सबसे चिंताजनक ख़बर ये है कि इंडस्ट्री की ग्रोथ रेट 6.7 प्रतिशत से गिरकर सिर्फ आधा प्रतिशत रह गई है. इसमें भी मैन्युफ़ैक्चरिंग यानी कारख़ानों में बनने वाले सामान में बढ़ोत्तरी की जगह आधे प्रतिशत की गिरावट दर्ज हुई है. उधर खेतीबाड़ी या कृषि क्षेत्र में बढ़ोत्तरी की दर 4.9 से गिरकर 2.1 प्रतिशत और सर्विसेज़ की दर भी 7.3 प्रतिशत से गिरकर 6.8 ही रह गई है.

जीडीपी को कैसे समझें : जीडीपी यानी ग्रास डोमेस्टिक प्रोडक्ट. हिन्दी में इसे सकल घरेलू उत्पाद कहते हैं. लेकिन इसका मतलब होता है कि देशभर में जहां कहीं भी, जो कुछ भी बन रहा है, जो कोई भी जितनी भी कमाई कर रहा है, उस सबका कुल जोड़ और कमाई का हिसाब तो आसानी से लगता नहीं है, इसलिए यह हिसाब लगाने का आसान तरीक़ा है, ख़र्च का हिसाब लगाना. कुछ भी ख़रीदने पर हुआ कुल ख़र्च ही देश की जीडीपी होती है. इसमें होने वाली बढ़ोत्तरी को ही जीडीपी ग्रोथ रेट कहते हैं और उसी से हिसाब लगता है कि देश किस रफ्तार से तरक्की कर रहा है. यहां साथ में ही प्रति व्यक्ति जीडीपी यानी देश में एक इंसान के ऊपर कितनी जीडीपी बनी, इसका आंकड़ा भी जारी होता है. और अगर ये प्रति व्यक्ति आंकड़ा नीचे रहा तो इसका सीधा मतलब ये होता है कि देश के नागरिक परेशानी में हैं, उनकी ज़रूरतें पूरी होने में मुश्किल हो रही है या ज़रूरतें पूरी नहीं हो पा रही हैं. जबकि ये आंकड़ा ऊंचा होने का अर्थ नागरिकों की जिंदगी बेहतर होना है. ज़रूरी नहीं कि

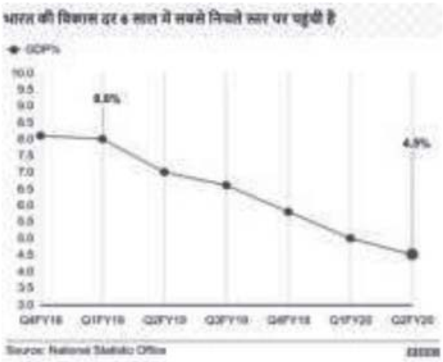

इसका मतलब देश में ग़रीबी या भुखमरी नहीं है, क्योंकि ये औसत होता है. अमरीका की औसत जीडीपी 55 हज़ार डॉलर के आसपास है, लेकिन वहां भी लगभग दस प्रतिशत लोग पेट भरने का इंतज़ाम नहीं कर पाते हैं.

परेशान करने वाले आंकड़े : भारत की प्रति व्यक्ति जीडीपी इस साल मार्च में 2041 डॉलर यानी क़रीब एक लाख छियालीस हज़ार रुपए थी. इतनी सालाना कमाई पर बहुत से लोग मुंबई जैसे शहर में आज भी परिवार पाल रहे हैं. लेकिन ये औसत है. इसका अर्थ ये भी है कि मुट्ठी भर लोग इससे हज़ारों या लाखों गुना कमा रहे हैं, और देश की आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा इसका दसवां या सौवां हिस्सा भी हासिल नहीं कर पा रहा है. लेकिन वह गैर-बराबरी की बहस है, वह एक अलग विषय भी है. जीडीपी का तिमाही आंकड़ा इसलिए भी चिंता का विषय है, क्योंकि पिछले डेढ़ साल में ही ये गिरते-गिरते वहां पहुंच चुका है, जो पिछले छह साल का सबसे कमज़ोर आंकड़ा है. इसके साथ ही दूसरी बड़ी चिंता यह है कि हाल फिलहाल स्थिति सुधरने के आसार भी नहीं दिखते.

ज्यादातर अर्थशास्त्रियों का मानना है कि इस बार गिरावट बढ़ने का अर्थ है कि पूरा साल सुधरना मुश्किल है. यानी वे पूरे वित्त वर्ष के लिए ही अब तरक्की की रफ्तार में गिरावट देख रहे हैं. वह भी तब, जब सरकार इसमें सुधार के लिए एक नहीं, अनेक क़दम उठा चुकी है. सरकार पांच ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यस्था बनाने का लक्ष्य लेकर बैठी है. कैलकुलेटर से हिसाब लगाने से ही पता चलता है कि उसके लिए जीडीपी ग्रोथ रेट 12 प्रतिशत से ऊपर होनी चाहिए. पिछले दस साल से तो भारत 10 प्रतिशत ग्रोथ का ही सपना देखता रहा है, और आमतौर पर सालाना सात से आठ प्रतिशत के बीच बढ़ता भी रहा. पिछले साल रेट गिरकर भी क़रीब-क़रीब सात प्रतिशत रहा है. लेकिन अब अगर इसमें और गिरावट आती है तो ये गंभीर परेशानी का लक्षण है. परेशानी का लक्षण इसलिए भी है कि सबसे तेज़ गिरावट खर्चों में दिख रही है. वह भी आम आदमी के खर्चों में, जिसे कंज्यूमर स्पेंडिंग कहा जाता है. यानी लोग सामान नहीं ख़रीद रहे हैं, लोग ख़र्च में कटौती कर रहे हैं और जो पैसा उनके पास है, उसे सोच समझकर ख़र्च कर रहे हैं या ज्यादा बचा रहे हैं. इसका असर यह है कि ख़र्च नहीं होगा तो सामान बिकेगा नहीं. बिकेगा नहीं तो बनाने वाले व्यापारी और कंपनियां मुश्किल में होंगे. वे मुश्किल में होंगे तो उनके कर्मचारी मुश्किल में होंगे. लोगों की तनख्वाह नहीं बढ़ेगी. हो सकता है, मिले भी नहीं, और नौकरी जाने का डर भी बना हुआ है. बहुत से लोगों की नौकरियां जा भी चुकी हैं. चारों ओर से ऐसी ख़बरें आती जा रही हैं. इसका अर्थ है कि लोगों को खुद की तरक्की का भरोसा नहीं है.

अभी तक सरकार ने जो किया है, वह सब इस रास्ते पर है कि बैंकों से क़र्ज उठे, पैसा सिस्टम में आए, कारोबार तेज़ हो और तरक्की बढ़े. मगर क़र्ज सस्ता हो जाना ही इस समस्या का इलाज नहीं है. वित्तमंत्री का कहना

है कि देश में मंदी नहीं आ रही है. अर्थशास्त्र के सिद्धांत से उनकी बात सही हो सकती है कि परिभाषा के हिसाब से ये मंदी या संकुचन की स्थिति नहीं है, जिसे अंग्रेज़ी में रिसेशन कहते हैं. लेकिन जिसे अंग्रेज़ी में स्लो डाउन कहते हैं, उसे भी तो हिंदी में मंदी ही कहा जाएगा. और वित्तमंत्री ने ख़ुद माना है कि शायद स्लोडाउन तो है. अब सवाल ये है कि इस स्लोडाउन का इलाज क्या है. कंज्यूमर के मन में ये भरोसा कैसे आएगा कि वह जेब में हाथ डाले और पैसा निकालकर ख़र्च करे. उसका तो एक ही तरीक़ा है कि जॉब मार्केट में तेज़ी आये. जब लोगों को दिखेगा कि उनके हाथ में एक नौकरी और सामने दो ऑफर भी हैं, तब उनके मन में ये उत्साह जागता है कि वे कमाने से पहले ही ख़र्च करने की सोचने लगते हैं.

ये हाल कैसे आएगा, इसके लिए विद्वानों के पास बहुत से सुझाव हैं. लेकिन इस वक्त सरकार की एक समस्या यह भी दिख रही है कि जो सुझाव सामने आ जाए, उसे ही आज़माकर देख लिया जाए. ये रास्ता चलता नहीं है. इससे शेयर बाजार भले ही चल जाए, अर्थव्यवस्था चलना मुश्किल है. अभी आर्थिक सलाहकार परिषद में जो नए विद्वान जुड़े हैं, उनके पास बहुत अनुभव है और कुछ बहुत कारगर सुझाव भी. सरकार को कम से कम इन लोगों की सलाह पर ध्यान देना पड़ेगा. पूर्व प्रधानमंत्री डॉक्टर मनमोहन सिंह ने नोटबंदी के साथ ही आशंका जता दी थी कि जीडीपी ग्रोथ रेट में एक से डेढ़ प्रतिशत की गिरावट आ सकती है. अब जबकि ये सच होता दिख रहा है, कम से कम उनसे बात करके इस बीमारी का इलाज तो पूछा ही जा सकता है.

लेकिन ताज़ा आंकड़े आने के बाद इतना तो कहा ही जा सकता है कि मंदी की तकनीकी परिभाषा और रिसेशन या स्लोडाउन के फ़र्क वाले शब्दजाल में उलझने के बजाय, सरकार को अब गंभीरता से मान लेना चाहिए कि हालात बहुत ख़राब हैं, और इस हाल से उबरने के लिए पार्टियों का भेद भुलाकर सबको साथ लेकर चलने और युद्ध स्तर पर उपाय करने की तरफ़ बढ़ना चाहिए. **–बीबीसी**

(लेखक सीएनबीसी आवाज़ के पूर्व संपादक हैं)

मूडीज़ ने भारत की अर्थव्यवस्था की रेटिंग 'स्थिर' से 'नकारात्मक' की

क्रेडिट रेटिंग एजेंसी मूडीज़ इन्वेस्टर्स सर्विस ने भारत की रेटिंग पर अपने नज़रिये को बदलते हुए इसे 'स्थिर' से 'नकारात्मक' कर दिया है. उसने इसकी वजह भारत की आर्थिक विकास की स्थिति पहले की तुलना में कम रहना बताया है. एजेंसी का कहना है कि सुस्त अर्थव्यवस्था को लेकर जोखिम बढ़ रहा है. रेटिंग एजेंसी ने कहा कि यह आंशिक रूप से आर्थिक सुस्ती को दूर करने में सरकार की नीतिगत अक्षमता को दिखाता है, इसके कारण पहले से बहुत अधिक कर्ज के दबाव में डूबे भारत पर कर्ज का बोझ और बढ़ा है.

दो साल पहले मूडीज़ ने भारत की रेटिंग को Baa3 से Baa 2 किया था, लेकिन अपनी नई रिपोर्ट में मूडीज़ ने लिखा कि 'देश में आर्थिक सुस्ती को गहराने और इस अवधि को लंबा होने से रोकने के भारत सरकार के उपायों के बावजूद, ग्रामीण परिवारों की आमदनी पर लंबे समय से पड़ रहे प्रभाव, रोज़गार सृजन की कमज़ोर स्थिति और गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थानों में बढ़ती क्रेडिट के संकट ने आर्थिक सुस्ती की आशंका को बढ़ा दिया है. एजेंसी ने लिखा है कि अगर जीडीपी दर में मामूली वृद्धि अपने उच्च दर पर नहीं लौटती, तो सरकार को बजटीय घाटे और बढ़ते कर्ज को रोकने जैसी मुश्किलों को कम करने में महत्वपूर्ण बाधाओं का सामना करना पड़ेगा. अन्य रेटिंग्स पर भारत का समर्थन करते हुए अंतरराष्ट्रीय रेटिंग एजेंसी ने कहा कि ऐसा लगता है कि भारत में यह सुस्ती अभी लंबे वक्त तक चलने वाली है.

अप्रैल-जून के बीच भारत की अर्थव्यवस्था में केवल 5 फ़ीसदी की वृद्धि हुई. इसकी वजह वैश्विक व्यापार में उपजे मतभेद, उपभोक्ता मांग और सरकारी खर्च में कमी को बताया गया है. मूडीज़ ने 2004 में यूपीए सरकार के दौरान रेटिंग को गिराकर Baa 3 कर दिया, लेकिन नवंबर 2017 में मोदी सरकार के पहले कार्यकाल में इसे बढ़ाकर Baa 2 कर दिया गया था. हालांकि मूडीज़ पहले भी जीडीपी, नोटबंदी, नॉन परफॉर्मिंग एसेट्स (एनपीए) को लेकर सवाल उठाता रहा है. और बीते कुछ दिनों के दौरान मूडीज़ ने साल 2019-20 के लिए भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की अनुमानित वृद्धि दर घटा कर 5.8 फ़ीसदी कर दी थी, जो पहले 6.2 प्रतिशत थी और अब 4.5 प्रतिशत है. अगर देश की आर्थिक विकास दर में आगे भी गिरावट का दौर जारी रहा तो मूडीज़ की रेटिंग पर और भी असर पड़ सकता है.

हालांकि ऐसा नहीं है कि क्रेडिट रेटिंग एजेंसी में सबकुछ नकारात्मक हो गया है. इसमें भारत के दीर्घकालिक विदेशी मुद्रा बांड और बैंक जमा सीमा में कोई बदलाव नहीं आया है. ये क्रमशः Baa 1 और Baa 2 हैं.

अल्पकालिक विदेशी मुद्रा बांड और बैंक जमा सीमा भी प्राइम-2 पर बरकरार हैं. जबकि दीर्घावधि स्थानीय मुद्रा बांड और जमा सीमा प्राइम-1 पर ही मौजूद हैं.

क्रेडिट रेटिंग क्या है?

किसी भी विदेशी या घरेलू कंपनी के लिए ये आकलन करना कठिन होता है कि भारत या किसी अन्य देश में अर्थव्यवस्था की मौलिक स्थिति कैसी है. ऐसे में कंपनियां उस देश की क्रेडिट रेटिंग पर निर्भर करते हुए अपने निवेश की योजनाएं बनाती हैं. ऐसा माना जाता है कि क्रेडिट रेटिंग एजेंसी किसी देश में वहां के हर आयाम को देखते हुए एक रेटिंग देती है. ये वहां की राजनीतिक स्थिति, पॉलिसी फ्रेमवर्क, आयात-निर्यात और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उनकी प्रतिस्पर्धा करने की ताक़त आदि को देखते हुए यह रेटिंग बनाती हैं.

क्रेडिट रेटिंग एजेंसियां इसके बाद उन देशों को अलग अलग टैग देती हैं. मूडीज़ ए, बी और अनुमानित सी रेटिंग देती है. Aaa सबसे बेहतरीन और C सबसे ख़राब रेटिंग मानी जाती है. इस रेटिंग के आधार पर कंपनियां अपनी निवेश योजनाएं बनाती हैं. ये रेटिंग निवेश करने के लिए आकलन का एक फैक्टर होती है. **–बीबीसी**

जीडीपी में गिरावट रोकने का कोई झटपट उपाय नहीं है

❑ इला पटनायक

नीतियां जमीनी वास्तविकताओं की समझ वाले विशेषज्ञों द्वारा, पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद बनाई जानी चाहिए. नेताओं को चाहिए कि वे इनकी जिम्मेदारी लें और समय रहते बदलावों के बारे में कारोबारियों को सूचित करें. वर्ष 2019-20 की दूसरी तिमाही के लिए सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की वृद्धि दर का 4.5 प्रतिशत का आंकड़ा आर्थिक विकास की रफ्तार धीमी पड़ने की आशंका की पुष्टि करता है. आर्थिक सुस्ती का सबसे चिंताजनक पहलू विनिर्माण क्षेत्र का है. इस वर्ष की वृद्धि दर विशेष रूप से खराब रही है, जो पहली तिमाही के 0.6 प्रतिशत से घटकर दूसरी तिमाही में 0.1 प्रतिशत पर आ गई. यह अनुमान औद्योगिक उत्पादन के सूचकांक पर आधारित है, जिसका डेटा पहले ही आ चुका है और तेज गिरावट के संकेत दे चुका है.

विनिर्माण सेक्टर को महज आर्थिक सुस्ती का ही सामना नहीं करना पड़ रहा है, बल्कि इसने गत वर्ष की जुलाई-सितंबर तिमाही के मुकाबले 1 प्रतिशत कम उत्पादन दर्ज किया है. दरअसल एक बड़ी विकासमान अर्थव्यवस्था में इस सेक्टर में आमतौर पर धीमी ही सही, पर वृद्धि जारी रहती है. इसमें सुस्ती आ सकती है, पर संकुचन शायद ही देखने को मिलता है. ये सही है कि कुल मिलाकर अर्थव्यवस्था में संकुचन नहीं देखने को मिला है, पर विनिर्माण क्षेत्र में संकुचन और अन्य सेक्टरों में सुस्ती के मद्देनज़र समस्या को गंभीरता से लेने और सुधारों की योजना तैयार करने की ज़रूरत आ पड़ी है. अर्थव्यवस्था में आए इस तरह के धीमेपन से मात्र मांग बढ़ाकर नहीं निपटा जा सकता है. वैसे, मुद्रा नीति को कार्यान्वित करने की वित्तीय सेक्टर की अपर्याप्त क्षमता और सरकार के निवेश बढ़ाने की सीमित गुंजाइश को देखते हुए मांग बढ़ाना भी आसान नहीं होगा. इसके लिए कोई जादुई साधन या फिर झटपट उपाय मौजूद नहीं है.

नीतिगत परिवर्तनों की ज़रूरत

आर्थिक वृद्धि की रफ्तार कम पड़ने का एक प्रमुख कारण है नीतियों में बदलाव. दिवालिया कानून, जीएसटी और मुद्रास्फीति के पूर्वनिर्धारित लक्ष्य जैसे नीतिगत बदलाव सकारात्मक हैं. पर इन बदलावों के प्रभावी होने के लिए अन्य बदलावों की ज़रूरत है, जो कि अभी किए नहीं गए हैं. उदाहरण के लिए, दिवालिया कानून के सही ढंग से काम करने के लिए अच्छे से काम करने वाली अदालतों की ज़रूरत है. महंगाई को पूर्वनिर्धारित दायरे में रखने के लिए प्रतिस्पर्धात्मक वित्तीय व्यवस्था चाहिए. औपचारिक क्षेत्र की कंपनियों के विस्तार के लिए अनुकूल कारोबारी माहौल की दरकार है.

निवेशक नीतिगत अनिश्चितता की शिकायत करते हैं. इसका मतलब ये है कि नीतियां बारंबार बदली जाती रहती हैं और इस कारण निवेशकों के लिए योजनाएं बनाना मुश्किल हो जाता है क्योंकि आगे क्या होगा, उनके लिए इसका अनुमान लगाना संभव नहीं होता है. इस समस्या के समाधान के लिए ज़रूरी है कि नीतियां ज़मीनी वास्तविकताओं को समझने वाले विशेषज्ञों द्वारा, पर्याप्त विचार-विमर्श के बाद बनाई जाए, ताकि किसी नीति को एक झटके में लागू करने के बजाय पहले उसके सकारात्मक और नकारात्मक प्रभावों पर विचार हो सके. इसके लिए सक्षम टीमों के गठन के साथ-साथ आलोचनाओं को गंभीरता से लेने की भी ज़रूरत है.

नेताओं की जवाबदेही

इसके अलावा, शीर्ष नेताओं को अपने निर्णयों की जिम्मेदारी लेनी होगी और राजनीतिक समर्थन और आमसहमति का वातावरण निर्मित करना होगा, ताकि कारोबारियों को समय रहते नीतिगत बदलावों की जानकारी मिल सके. यदि नीतियों की घोषणा करने के बाद बारंबार उनमें बदलाव किया जाता है या उन पर आगे और काम नहीं किया जाता है, तो कारोबारियों का सरकार की व्यवस्था पर भरोसा नहीं रह जाता है और वे पैसा लगाने से बचते हैं.

आज, दिवालिया अर्थव्यवस्था पर ज़रूरत से अधिक बोझ है. बट्टे खातों और नाकाम उद्यमों में आज हजारों करोड़ रूपये फंसे पड़े हैं. यदि नए दिवालिया कानून को लागू करने से पहले ही पर्याप्त तैयारी की गई होती, तो आज पेश आ रही कुछेक परेशानियों से बचा जा सकता था. दिवालियेपन के शुरुआती मामलों से निपटना आसान नहीं होने वाला था. ये भी मालूम था कि इसके लिए कहीं अधिक तैयारी किए जाने की ज़रूरत थी. भारत अनौपचारिक से औपचारिक अर्थव्यवस्था में तब्दील हो रहा है. औपचारिक क्षेत्र की कंपनियों को अपने विस्तार के लिए कम सरकारी नियम-कानूनों, ऋण की उपलब्धता, पर्याप्त बुनियादी सुविधाओं और मुनासिब कर ढांचे की दरकार है. सरकार को ये देखने की ज़रूरत है कि ऐसी परिस्थितियां कैसे निर्मित की जा सकती हैं. **–द प्रिन्ट**

अर्थव्यवस्था की रीढ़ होते हैं लघु उद्योग

सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्योग किसी देश की आर्थिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वह चाहे विकसित देश हों या विकासशील। ये छोटे उद्यम किसी देश के सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी में अहम योगदान देते हैं और औद्योगिक व सेवाक्षेत्र में लोगों को रोजगार देते हैं। कढ़ाई-बुनाई से लेकर दवाई तक, खेत-खलिहान से लेकर खेल के मैदान तक अनेक क्षेत्रों में अपनी अहम भूमिका निभाकर इन उद्यगों ने कई देशों में अर्थव्यवस्था को प्रगति देने का काम किया है। गांधीजी ने अर्थव्यवस्था के इसी मॉडल की पैरोकारी की थी। अफसोस की बात है कि विकास के पश्चिमी औद्योगिक मॉडल को अपनाकर भारत ने इन जनाधारित उद्योगों की अनदेखी की, जिसका भयावह परिणाम भुगतने को देश की जनता अभिशप्त हो रही है।

शहरों में पहुंच रहा है ग्रामीण भारत का पैसा

❑ राजू सजवान

खाद्य के बजाय गैर खाद्य मुद्रा स्फीति बढ़ने से जहां ग्रामीणों की आमदनी कम हो रही है, वहीं उन पर खर्च का दबाव बढ़ रहा है।

पिछले दो साल से खाद्य मुद्रास्फीति कम हो रही है और गैर खाद्य मुद्रास्फीति बढ़ रही है, जो यह संकेत देता है कि ग्रामीण क्षेत्र की आय शहरों में पहुंच रही है। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए शुभ संकेत नहीं हैं। खासकर ऐसे समय में, जब कमजोर मानसून की वजह से कृषि संकट के और गहराने के संकेत मिल रहे हैं।

हाल ही में रेटिंग एजेंसी क्रिसिल की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि खाद्य मुद्रास्फीति कम हो रही है, जबकि गैर खाद्य मुद्रास्फीति में वृद्धि हो रही है। इसका सीधा सा मतलब है कि ग्रामीणों, खासकर किसानों की आमदनी तो कम होगी, लेकिन उन्हें गैर खाद्य वस्तुएं खरीदने के लिए अधिक पैसा खर्च करना पड़ेगा और ग्रामीण क्षेत्रों का पैसा शहरों में जाएगा।

सांख्यिकीय मंत्रालय की ओर से पिछले माह जारी आंकड़े बताते हैं कि जून माह में उपभोक्ता खाद्य वस्तुओं के मूल्य सूचकांक में 2.17 प्रतिशत, जबकि सामान्य सूचकांक (सभी समूह) में 3.18 प्रतिशत ही वृद्धि हुई है। अगर केवल ग्रामीण क्षेत्र की ही बात करें तो ग्रामीण क्षेत्र में खाद्य वस्तुओं के मूल्य सूचकांक में केवल 0.43 प्रतिशत वृद्धि हुई है, जबकि इसके मुकाबले सामान्य मूल्य सूचकांक में 2.21 प्रतिशत वृद्धि हुई है। आंकड़े बताते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में फलों के मूल्य सूचकांक में 7 प्रतिशत, सब्जियों में 2 प्रतिशत, चीनी में 1.6 प्रतिशत की कमी हुई है, जबकि गैर खाद्य वस्तुओं में स्वास्थ्य मूल्य सूचकांक में 9.61 फीसदी, मनोरंजन पर 6.24 प्रतिशत, शिक्षा पर 8.68 प्रतिशत, घरेलू सामान व सेवाओं पर 5.20 फीसदी वृद्धि हुई है। ये आंकड़े साफ संकेत देते हैं कि ग्रामीण अपनी कमाई का काफी हिस्सा शहरी वस्तुओं पर खर्च कर रहे हैं।

ऐसे समय में, जब कमजोर मानसून की वजह से ग्रामीण अर्थव्यवस्था की हालत सही नहीं मानी जा रही है, खाद्य वस्तुओं के मूल्य सूचकांक में वृद्धि न होना अच्छे संकेत नहीं माने जा रहे हैं। इसी सप्ताह नेशनल कौंसिल ऑफ अप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च (एनसीएईआर) की रिपोर्ट में कहा गया है कि कमजोर मानसून ग्रामीण क्षेत्र की मांगों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है और मांग प्रभावित होते ही उद्योगों पर असर पड़ता है। यहां यह उल्लेखनीय है कि इस वर्ष मानसून के कमजोर होने के संकेत मिलते ही ऑटो सेक्टर पहले ही अपना उत्पादन कम कर चुका है और इस वजह से इस सेक्टर में नौकरियों के जाने का सिलसिला शुरू हो चुका है।

चालू वित्त वर्ष में ग्रामीण क्षेत्र में सकल मूल्य संवर्धित (जीवीए) और किसानों की आमदनी कम होने की रिपोर्ट भी सामने आ रही है। क्रिसिल पहले अपनी रिपोर्ट में कह चुका है कि वित्त वर्ष 2017 के मुकाबले 2019 में कृषि जीवीए में 11.4 प्रतिशत के मुकाबले 7.6 फीसदी पर पहुंच गई और इसमें गिरावट हुई है। वहीं एनसीएईआर की रिपोर्ट बताती है कि रियल जीवीए एग्रीकल्चर में 2017-18 में 5 फीसदी था, जो 2018-19 में घटकर 2.9 फीसदी रह गया। बल्कि 2019-20 की तिमाही रिपोर्ट्स में भी जीवीए में गिरावट की बात कही गई है।

ऐसे में, सवाल उठ रहा है कि ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों को मिलने वाले प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि के रूप में 6000 रुपए से अर्थव्यवस्था को कितना लाभ होगा। क्रिसिल ने तो अपनी रिपोर्ट में कहा है कि इसे एक उम्मीद के तौर पर देखा जाना चाहिए। हालांकि बैंकों में सीधे तौर पर हस्तांतरण होने के बाद इस पैसे का इस्तेमाल किसान अपना कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए करेंगे, इसकी संभावना कम ही दिखती है। –डाउन टू अर्थ

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की जयंती पर संगोष्ठी संपन्न

भारत के प्रथम राष्ट्रपति और भारतीय संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की जयंती के एक दिन पहले 'भारत के निर्माण में देशरत्न का योगदान' विषय पर एक राज्य स्तरीय संगोष्ठी का आयोजन सदाकत आश्रम, पटना में सम्पन्न हुआ। संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रीय लोक समिति के मंत्री विनोद कुमार रंजन ने कहा कि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने चंपारण सत्याग्रह के समय पूज्य बापू के साथ किसानों की समस्या को लेकर पांचजन्य फूंका था, लेकिन दुख की बात है कि आज भी किसानों की समस्या जस की तस है। किसान खेती-किसानी छोड़कर पूरे देश में भटक रहे हैं। उन्होंने सरकार से मांग की कि किसानों के हित में देश में सार्थक नीतियां बनायी जानी चाहिए।

सर्व सेवा संघ के पूर्व मंत्री विजय कुमार ने केन्द्र सरकार से निवेदन किया कि डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जन्म दिवस को पूरे देश में मेधा दिवस के रूप में मनाया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि भारत की धरती पर अहिंसक समाज परिवर्तन के ऐसे उदाहरणों से नयी पीढ़ी को परिचित कराने का काम बड़े पैमाने पर केन्द्र एवं राज्य सरकारों को करना चाहिए। बिहार विद्यापीठ के अध्यक्ष विजय प्रकाश ने कहा कि आजादी के 72 वर्षों बाद भी गांव और किसानों की स्थिति रोज-रोज बिगड़ती जा रही है, जिसके फलस्वरूप हिंसा और नक्सलवाद देखने को मिलता है, आज पश्चिम की नकल के चलते आमदनी कम और लागत ज्यादा हो रही है। आश्रम के सचिव आनंद कुमार राय ने कहा कि कृषि के साथ खादी ग्रामोद्योग, पशुपालन, मत्स्यपालन आदि छोटे उद्योग क्षीण पड़ गये हैं।

सीसीएमटी के अनिल कुमार ने बताया कि देश में 40 प्रतिशत नौजवानों की मूल समस्या रोजगार है। गांधी की बुनियादी तालीम को छोड़कर अंग्रेजियत के दबाव में हम बुनियादविहीन शिक्षा का विस्तार कर रहे हैं, जिसमें न तो जीवन है और न जीविका। संगोष्ठी में विनोद कुमार रंजन, रामनाथ ठाकुर, अशोक कुमार, मीना कुमारी, सारंगधर शर्मा, रिंकू, राकेश, राधेश्याम रंजन, रेणु कुमारी, संतोष कुमार, शरण्या कुमारी, रेखा कुमारी, वीरेन्द्र, गोविन्द और आशा ने भागीदारी की।

–चन्द्रभूषण

गिरती जीडीपी से आम आदमी को क्या डरना चाहिए!

लगातार बुरे दौर से गुज़र रही भारत की अर्थव्यवस्था को लेकर चौंकाने वाले आंकड़े सामने आए हैं. आधिकारिक आंकड़ों के मुताबिक़, भारत की अर्थव्यवस्था में जुलाई से सितंबर के बीच देश का सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी महज़ 4.5 फ़ीसदी ही रह गई. यह आंकड़ा बीते 6 सालों में सबसे निचले स्तर पर है. पिछली तिमाही की भारत की जीडीपी 5 फ़ीसदी रही थी. जीडीपी के नए आंकड़े सामने आते ही विपक्षी दलों ने सरकार को घेरना शुरू कर दिया. कांग्रेस प्रवक्ता ने पूछा कि सरकार जश्न क्यों मना रही है? क्या उन्हें लगता है कि उनकी जीडीपी (गोडसे डिवीसिव पॉलिटिक्स) से विकास दर दहाई के आंकड़े में पहुंच जाएगी? भारत के पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी इन आंकड़ों पर चिंता जताई है और कहा है कि सरकार देश की अर्थव्यवस्था में जो बदलाव कर रही है, वह बिलकुल भी मददगार साबित नहीं हो रहा है. जीडीपी के ये आंकड़े भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए कितने ख़तरनाक हैं, यह जानने के लिए पढ़िये अर्थशास्त्री विवेक कौल का नज़रिया। -सं.

जीडीपी के आंकड़े दिखाते हैं कि भारत की अर्थव्यवस्था चरमरा गई है. अगर हम जीडीपी के अलग-अलग आंकड़ों को देखें तो विकास दर 4.5 प्रतिशत इसलिए रही है क्योंकि सरकारी ख़र्च 15.6 प्रतिशत बढ़ा है. ऐसे में अगर हम सरकारी ख़र्च को अलग रखें और तब पूरी अर्थव्यवस्था को देखें तो हम पाएंगे कि स्थिति और भी ज्यादा बुरी है. इस ख़र्च से अलग जो भारतीय अर्थव्यवस्था है, उसकी विकास दर गिरकर लगभग तीन प्रतिशत हो गई है. अभी भी जो थोड़ी-बहुत विकास दर दिख रही है, वह इसलिए है क्योंकि सरकार पहले से बहुत ज्यादा सरकारी ख़र्च कर रही है. इस बात को ऐसे भी समझ सकते हैं कि निजी क्षेत्रों की विकास दर लगभग नहीं के बराबर हो गई है.

सरकार के क़दमों का क्या हुआ? : सरकार ने अर्थव्यस्था को पटरी पर लाने के लिए कुछ क़दम उठाए थे, जैसे कॉरपोरेट टैक्स में कटौती की गई थी. इसके साथ ही भारतीय रिजर्व बैंक ने कई बार ब्याज़ दरों में कटौती की है. लेकिन रेट कट करने से कुछ ज्यादा फ़र्क नहीं पड़ेगा. दरअसल, आरबीआई तो ब्याज़ दरों में कटौती कर सकता है लेकिन जब तक बैंक अपनी ब्याज़ दरें नहीं घटाएंगे, तब कुछ असर नहीं दिखेगा. बैंक भी ब्याज़ दरें इसलिए नहीं काट रहे हैं, क्योंकि वे जिस दर पर पैसा उठा रहे हैं, वह बहुत ज्यादा है और यह तब तक कम नहीं होगा, जब तक सरकारी ख़र्च कम नहीं होगा, क्योंकि सरकार भी बाज़ार से ही पैसा उठाती है. अगर सरकार मौजूदा हालात में ख़र्च करना कम कर देगी तो और भी ज्यादा दिक्कतें पैदा हो जाएंगी.

इस तरह के आंकड़ों को देखने के बाद लोगों का अपनी अर्थव्यस्था पर भरोसा कम होने लगा है. ऐसे माहौल में लोग अपने ख़र्चों में कटौती करने लगते हैं. जब लोग अपने ख़र्च में बहुत ज्यादा कटौती करने लगते हैं, तो फिर यह भी अर्थव्यस्था के लिए मुश्किलें पैदा करने लगता है, क्योंकि जब एक व्यक्ति पैसे ख़र्च करता है तो दूसरा व्यक्ति पैसे कमाता है.

अगर समाज का एक बड़ा हिस्सा पैसे ख़र्च करना कम कर देता है, तो इससे लोगों की आय कम होने लगती है और फिर वे लोग भी अपने ख़र्चे कम कर देते हैं. इस तरह से यह एक चक्र बनता है, जिसका बहुत नकारात्मक असर अर्थव्यस्था पर पड़ता है. जीडीपी के आंकड़ों को बहुत ज्यादा गंभीरता से देखे जाने की ज़रूरत है, क्योंकि निजी क्षेत्र की विकास दर गिरकर तीन प्रतिशत हो गई है. अगर हम निवेश में विकास दर को देखें तो वह गिरकर एक प्रतिशत पर आ गई है, इसका मतलब है कि निवेश लगभग नहीं के बराबर हो रहा है.

जब तक अर्थव्यवस्था में निवेश नहीं बढ़ेगा, तब तक नौकरियां कहां से पैदा होंगी, जब नौकरियां पैदा नहीं होंगी तो लोगों की आय में वृद्धि कैसे होगी, जब लोगों की आय में वृद्धि नहीं होगी तो लोग ख़र्च कैसे करेंगे और जब लोग ख़र्च नहीं करेंगे तो निजी खपत कैसे बढ़ेगी. ये है पूरा चक्र. यह सब कुछ एक दूसरे के साथ इसी तरह से जुड़ा हुआ है.

क्या क़दम उठाए सरकार? : जिस स्थिति में भारत की अर्थव्यवस्था है, वहां पर तुरंत कोई भी क़दम उठाने से नहीं हो सकता. अभी सरकार को जो भी क़दम उठाने हैं, उनका असर लंबे समय के बाद देखने को मिलेगा. जैसे, अगर सरकार श्रम सुधार या भूमि सुधार की दिशा में काम करती है तो इनका सकारात्मक असर लंबे समय में धीरे-धीरे देखने को मिलेगा. इसलिए अर्थव्यवस्था को सुधारने का कोई शॉर्टकट नहीं होता, सरकार के पास कोई जादू की छड़ी भी नहीं होती जिसे घुमाते ही अर्थव्यवस्था सुधर जाए. यह आम आदमी के डरने की स्थिति है। ❑

असंगठित कामगारों के मुद्दों पर जन संवाद

असंगठित कामगार अधिकार मंच, वाराणसी (AKAM) द्वारा 7 दिसंबर को बेघर समस्या से निपटने के मुद्दों एवं मज़दूरों के बदलते श्रम कानून पर एक जन सभा का आयोजन सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट वाराणसी में किया गया। जिसमें संजीव सिंह, डॉ आनंद प्रकाश तिवारी, डॉ मोहम्मद आरिफ, संजय राय सहित शहरी मुद्दों पर कार्यरत कई सामुदायिक संगठनों ने भागीदारी की।

निर्माण मजदूरों की वर्तमान स्थिति पर अपनी बात रखते हुए वक्ताओं ने कहा कि शहर में निर्माण मजदूरों को काम न मिलने की स्थिति में उनकी रोजी रोटी पर प्रभाव पड़ने लगा है इस स्थिति में मजदूर दूसरे शहरों में पलायन करने पर मजबूर है। विकास के नाम पर गरीबों की बस्तियों को उजाड़ा जा रहा है। ऐसे परिवारों को बिना पहले कही व्यवस्थित करने के, परिवार और बच्चों सहित उजाड़ देना उचित नहीं है। बैठक का संचालन असंगठित कामगार अधिकार मंच के डॉ. मोहम्मद आरिफ ने किया। **–डॉ मोहम्मद आरिफ**

श्रद्धांजलि

पंथराम वर्मा

जिन्होंने चरखे से अपने लिए कफन का कपड़ा बनाकर रखा था!

छत्तीसगढ़ के पाटन ब्लॉक के छोटे से गांव मटंग को पहचान दिलाने वाले सर्वोदय नेता पंथराम वर्मा का 96 वर्ष के उम्र में निधन हो गया। उनका जन्म 1 अक्टूबर 1924 को ग्राम मटंग में हुआ था। 1942 में तिरंगा झंडा लेकर गीत गाते हुए जुलूस निकालकर गांव-गांव में आजादी की अलख जगाने से शुरू हुई देश की स्वतंत्रता के प्रति उनकी लगन आज की युवा पीढ़ी के लिए अनुकरणीय है। गांधी और सर्वोदय संस्कार की यह ज्योति उन्होंने जीवनभर जलाये रखी।

भूदान का अभिदान : 1955 में विनोबाजी के नेतृत्व में चले राष्ट्रव्यापी भूदान यज्ञ से गहरे प्रभावित होकर वे भूदान प्राप्ति के लिए निकल पड़े और दस हजार एकड़ भूमि दान में प्राप्त की। 1983 से 1990 तक मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड के अध्यक्ष रहने के दौरान प्राप्त चार लाख एकड़ भूमि में से दो लाख एकड़ भूमि वितरण का जो अतुलनीय कार्य उन्होंने किया, वह प्रशंसनीय है! छत्तीसगढ़ी भाषा में रामलीला को नाट्य रूप में लिखने जैसे धर्मप्रवण कार्य करते हुए वे सर्वधर्म समभाव के लिए सतत प्रयत्नशील रहे।

चरखे से कातकर तैयार रखा था अपना कफ़न : सार्वजनिक जीवन के हर क्षेत्र में शामिल रहे स्व. पंथराम वर्मा जिला बीस सूत्रीय कार्यक्रम समिति छत्तीसगढ़ और तुलसी मानस प्रतिष्ठान से भी जुड़े रहे। वे खादी ग्रामोद्योग अम्बिकापुर, माता रूक्मणी सेवा संस्थान, विनोबा ग्राम एवं प्रदेश हरिजन सेवक संघ के सदस्य रहे। ग्राम मटंग में प्रतिवर्ष दशहरा के समय मालगुजारों द्वारा दशहरा उत्सव में 3 दिन के नाटक में अभिनय भी करते रहे। वे रामायण प्रतियोगिता, कविता लेखन व साहित्य में भी रुचि रखते थे। उन्होंने अपने पिताजी द्वारा लिखी छत्तीसगढ़ रामायण के अगले संस्करण को खुद ही लिखा। चरखा चलाकर कपड़ा बनाना उनका नित्य कर्म रहा। उन्होंने अपने देहावसान के समय के लिए अपने चरखे से ही कफन का कपड़ा बनाकर रखा था। छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री भूपेश बघेल के पुत्र चैतन्य बघेल सहित क्षेत्र के नागरिकों ने उन्हें नम आंखों से श्रद्धांजलि अर्पित की।

डॉ. सुनीता का आकस्मिक देहावसान

अत्यन्त दुखद समाचार है कि छात्र युवा संघर्षवाहिनी की साथी और सक्रिय सामाजिक कार्यकर्ता डॉ. सुनीता का गत 4 दिसंबर को रांची में आकस्मिक देहांत हो गया। उनकी आयु 50 वर्ष से भी कम थी। सांस की तकलीफ के चलते उन्हें निमोनिया हो गया था, जिसके कारण उस दिन उनके लिए सांस लेना अत्यंत दूभर हो गया। आनन फानन में उन्हें रांची के रिम्स अस्पताल पहुंचाया गया, जहां डॉक्टरों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया।

डॉ. सुनीता बेहद समर्पित और जुझारू समाजसेविका थीं। पिछले लगभग डेढ़ दशक से वे झारखंड के 'ताना भगतों' के साथ काम कर रही थीं। ताना भगत आदिवासी समाज में गांधीवादियों का एक समर्पित पंथ है। इन्हें रोजगार से जोड़ने के लिए उन्होंने कपास की खेती शुरू करवायी थी और हथकरघों का भी उपाय किया था। इस तरह उन्होंने आदिवासी ताना भगतों के लिए हैण्डलूम कताई और बुनाई का विस्तृत कार्यक्रम चला रखा था। रांची विश्वविद्यालय से पीएचडी उपाधि प्राप्त डॉ. सुनीता महिला गरिमा अभियान तथा ग्राम स्वराज्य अभियान से भी जुड़ी थीं।

रत्नेश्वरी नन्दन नहीं रहे

मुजफ्फरपुर में बिहार आन्दोलन के कर्मठ सिपाही रत्नेश्वरी नन्दन जी का विगत 25 नवम्बर को उनके जन्मदिन से एक दिन पहले जयपुर के एक निजी अस्पताल में निधन हो गया। वे 66 वर्ष के थे। 74 के बिहार आन्दोलन में उनकी सक्रिय भूमिका रही। आपातकाल के दौरान वे तेरह माह जेल में रहे। वे छात्र-युवा संघर्ष वाहिनी के मुजफ्फरपुर जिला संयोजक रहे। इस दौरान तुर्की भूमि संघर्ष के भी प्रमुख साथी रहे।

वे ओजस्वी वक्ता, रंगमंच के कुशल कलाकार, क्रान्ति गीतों के गायक और स्पष्टवादी थे। मतभिन्नताओं के बादजूद उनका किसी से वैर नहीं हुआ। उन्मुक्त वातावरण, भय व हिंसामुक्त समाज रचना और शान्ति की कामना संजोए वे चिर निद्रा में लीन हो गये।

उनकी चारों बेटियों ने उन्हें कंधा दिया तथा ज्येष्ठ पुत्री रागिनी ने मुखाग्नि दी। परिजनों और अजीज दोस्तों ने उनका प्रिय नारा - संपूर्ण क्रान्ति अब नारा है की गूंज से उन्हें अन्तिम विदाई दी।

सर्व सेवा संघ इन सभी के प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि व्यक्त करता है और उनकी आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।

कितनी आजाद है ग्रामीण पत्रकारों की कलम!

❑ पी. साईंनाथ

(वाराणसी के पराड़कर स्मृति सभागार में 29 नवंबर, 2019 को ''पत्रकारों पर हमले के विरुद्ध समिति'' CAAJ द्वारा आयोजित कार्यक्रम में दिये गये विचारोत्तेजक व्याख्यान के संपादित अंश)

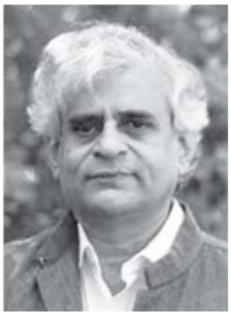

पत्रकारिता और मीडिया में पिछले बीस साल में बहुत बदलाव आया है। एक तो बहुत लोग भूल गये कि हिंदुस्तान की पत्रकारिता की परंपरा क्या है। दुनिया में कितने पत्रकार हैं, जिनके संग्रहित काम के सौ अंक प्रकाशित हैं? एक थे गांधी और दूसरे आम्बेडकर। इनके काम के सौ संकलन छपे हैं। हम भूल जाते हैं कि ये लोग पत्रकार थे। हम सभी जानते हैं कि भगत सिंह शहीद थे, राजनीतिक एक्टिविस्ट थे, पर यह भूल जाते हैं कि भगत सिंह एक पेशेवर पत्रकार भी थे। उन्होंने बारह से ज्यादा पत्रिकाओं में लिखा। चार में नियमित लिखा और चार भाषाओं में लिखा- पंजाबी, उर्दू, हिंदी और अंग्रेजी। पहले लिखा अकाली पत्रिका में पंजाबी में, फिर अर्जुन में लिखा, प्रताप में लिखा और फिर कीर्ति में लिखा। एक नौजवान ने चार भाषाओं में सैकड़ों लेख लिखे, जब तक कि 23 साल की उम्र में उसे फांसी नहीं दे दी गयी। मै बार बार सोचता हूं कि मैंने तो 23 साल में पत्रकारिता शुरू ही की थी। ऐसी थी आपकी परंपरा।

पिछले तीस साल में बदला क्या है? पारिवारिक, निजी, ट्रस्ट के मालिकाने से मीडिया कॉरपोरेट मालिकाने में चला गया। सबसे बड़ा मीडिया मालिक है मुकेश अंबानी। सबसे अमीर आदमी भी वही है। आप लोग जो ईटीवी देखते हैं, उसमें केवल तेलुगू को छोड़ के बाकी 19 चैनल मुकेश अंबानी की प्रॉपर्टी हैं। एक ट्रस्ट बना के उन्होंने इन्हें खरीदा। दिलचस्प है कि उसका नाम है इंडिपेंडेंट मीडिया ट्रस्ट। इसे खरीद के उन्होंने धंधा शुरू किया। मीडिया में कारपोरेटाइजेशन 1985 से आया। तब से ही ग्रामीण पत्रकारों की दिक्कत शुरू हुई। 1985 में दो बड़ी गतिविधियां शुरू हुईं। पहला, कॉरपोरेटाइजेशन लाने के लिए यूनियन को हटाना, संगठन खत्म करना। इसकी शुरुआत समीर जैन ने टाइम्स ऑफ इंडिया से की। कैसे खत्म करना है संगठन, इसका पहला मास्टर स्ट्रोक था रोजगार से ठेके पर पत्रकारों को लाना। आप 11 महीने के ठेके पर हैं। मै आपका एडिटर हूं। आठवें महीने में मैं आपको बुलाकर कहता हूं कि आप अमुक की सराहना में लिखो, इसको या उसको गाली दो। अब जो कुछ मैं कहता हूं, वही आप करने वाले हैं क्योंकि आपका नब्बे दिन का कांट्रैक्ट बचा है रिन्यू होने से पहले।

एक बार एक सीनियर पत्रकार ने मुझे फोन किया। उन्होंने बताया कि उनके अखबार में एक फ्रंट पेज न्यूज आ रहा है एक सीनियर कैबिनेट मंत्री के बारे में, और उनके नाम से आ रहा है। सौ प्रतिशत पेड न्यूज है और उनके नाम से छप रहा है। मैंने पूछा- ऐसा क्या हुआ बड़े भाई? आपके नाम पर पेड न्यूज आ रहा है? उन्होंने कहा, देख यार, तीस साल पहले हम सब वर्किंग जर्नलिस्ट एक्ट के नीचे थे। लेकिन मेरे अखबार में 11 महीने का कांट्रैक्ट है। कल मुझको संपादक ने केबिन में बुलाया था। वहां ब्रांड मैनेजर, सीएफओ और सीईओ बैठे थे। उसने बोला, एक बड़ी चीज आयी है मेरे पास। एक बड़ा कैबिनेट मंत्री है। तो एक बड़े पत्रकार का नाम भी होना चाहिए उसमें। मैंने पूछा, ये कहां से आया। संपादक ने कहा, पीआर एजेंसी से आया है, आप उसमें थोड़ा सुधार करो।

मैंने पूछा- फिर क्या कहा आपने? उन्होंने कहा- साईंनाथ, मैं क्या बोलूं! 11 महीने के कांट्रैक्ट पर हूं। अभी आठ महीना हो गया है। मेरा एक बेटा कालेज छोड़ के नौकरी ढूंढ़ रहा है। मेरी माताजी आईसीयू में हैं। दो बच्चे स्कूल छोड़ के निजी कालेज में जा रहे हैं। घर का तीस हजार ईएमआई जा रहा है हर महीने। तो क्या मैं हीरो बन जाऊं? मैं क्या बोलता उससे? मैं उससे नौकरी छोड़ के हीरो बनने को नहीं कह सकता था।

इस तरह कॉरपोरेटाइजेशन में मीडिया पूरा बदल गया। पत्रकारिता की समझ, उसका दर्शन और कॉरपोरेट का दर्शन एकदम अलग है। पत्रकार देखता है कि खबर क्या है, उसका सबूत क्या है। ये पत्रकार की मानसिकता है। कॉरपोरेट के लिए रेवेन्यू और प्राफिट असल चीज़ है। उनकी दिलचस्पी इसमें नहीं है कि पत्रकार ने बढिया स्टोरी की, वे ये देखते हैं कि स्टोरी से रेवेन्यू मिलेगा या नहीं। कॉरपोरेट सोचता है कि मैं इस स्टोरी को तब कवर करूंगा, जब मुझे कहानी से पैसा आएगा। उस कैबिनेट मंत्री से एक करोड़ की डील हुई थी तीन-चार हजार शब्दों के लिए, वह भी चुनाव के टाइम में। कॉरपोरेट और पत्रकार की मानसिकता अलग है। 1990 से मीडिया और पत्रकारिता दो अलग-अलग चीज़ बन गयी है। जर्नलिज्म हम करते हैं, मीडिया धंधा करता है, मुनाफा कमाता है। उसका मूल उद्देश्य यही है। पत्रकारिता को रेवेन्यू स्ट्रीम तक लाकर छोड़ दिया गया है।

अब पत्रकारों पर हमले की बात। 2013 तक सौ परसेंट हमले ग्रामीण पत्रकारों पर हुए। जितना बड़ा जानलेवा हमला पत्रकारों पर हुआ, उसमें एक भी अंग्रेजी का पत्रकार नहीं है। सारा हमला हिंदुस्तानी भाषाओं के पत्रकारों पर हुआ। यह भी एक क्लास हाइरार्की (वर्गीय भेद) है। बीते 15 साल में कुल 27 मौतें हुईं। सीपीजे की रिपोर्ट का परिचय लिखने के दौरान मैंने एक-एक सूची देखी। एक भी अंग्रेजी वाला पत्रकार नहीं था। एक था जिसने अंग्रेजी और हिंदी दोनों में रिपोर्ट किया था, डीडी श्रीनगर का रिपोर्टर। क्यों बढ़ गये ये हमले? इस देश में कारपोरेट जगत की ताकत है माइनिंग, सेज़ (एसईजेड), भूमि अधिग्रहण। ये सब कौन कवर करता है? ग्रामीण पत्रकार। जब कोई बड़ा एक्सपलोजन हो जाता है, तब शहरी पत्रकार आते हैं, फोटो और कोट लेते हैं और भाग जाते हैं। तो सबसे पहली और अहम बात, कारपोरेटाइजेशन में खबर ही रेवेन्यू का माध्यम बन गयी।

दूसरा बड़ा बदलाव 2013 में आया, जब शहरी और एलीट पत्रकार भी हमले की चपेट में आ गए। पहला कौन था? नरेंद्र दाभोलकर। छः साल के बाद भी इस क्राइम का मामला हल नहीं हुआ है। सब जानते हैं कि दाभोलकर सिर्फ अंधविश्वास विरोधी एक्टिविस्ट नहीं थे। पचीस साल उन्होंने एक पत्रिका चलायी थी। दूसरा गोविंद पानसारे। वे सीपीआई के लीडर थे; ट्रेड यूनयन लीडर, लेकिन इतिहासकार और कॉलमिस्ट भी थे। तीस साल से वे कालम लिख रहे थे। उनका

सबसे मशहूर काम क्या था? एक किताब- 'शिवाजी कौन थे'। यह रेशनल अप्रोच से लिखी किताब थी। इसमें उन्होंने दिखाया था कि छत्रपति शिवाजी महाराज एक सेकुलर राजा थे। उनका पर्सनल बाडीगार्ड एक अफगान पठान था। मुगल साम्राज्य के खिलाफ शिवाजी की लड़ाई सत्ता के लिए की गयी राजनीतिक जंग थी। शिवाजी महाराज ने पंद्रह पत्र लिखे हैं अपने अफसरों को, यह कहते हुए कि किसानों को नहीं लूटा जाना चाहिए, क्योंकि वे हमारे समाज का आधार हैं। पानसारे ने ज्यादा हमला कट्टरपंथियों पर किया। जहां भी उन्होंने लिखा या भाषण दिया, कट्टरपंथियो पर हमला किया। उनको उनके घर के सामने मार दिया गया। इसके बाद एमएम कलबुर्गी। वे पत्रकार थे। अकादमिक थे। विद्वान थे। कालम लिखते थे। उनको भी मार दिया गया। इन लोगों के बीच समान क्या था? तार्किक विचार। चौथी हत्या थी, हाई प्रोफाइल पत्रकार गौरी लंकेश की। इन चारों के बीच समान बात यह थी कि चारों ही भारतीय भाषाओं में लिख रहे थे। भारतीय भाषा में लिखने वाले पत्रकारों पर सबसे ज्यादा हमले हुए हैं। उनका क्लास अलग होता है। उनका एलीट स्टेटस नहीं होता है।

पिछले तीन साल में सबसे बड़ा इवेंट जो हुआ- नोटबंदी और जीएसटी, उसका ज्यादा असर ग्रामीण भारत पर पड़ा। कारपोरेट मीडिया में आप देखिए कि नोटबंदी के असर पर कितने आर्टिकल छपे हैं। अभी पवन जायसवाल यहां बैठे हैं, जिनके ऊपर एफआईआर हुआ मिड डे मील की स्टोरी पर। आप सब जानते हैं मिर्जापुर के नमक रोटी कांड के बारे में। नोटबंदी के बाद आपने कितनी स्टोरी देखी कि मिड डे मील पर उसका क्या असर पड़ा? महाराष्ट्र सबसे अमीर राज्य है। वहां एक दो महीने के लिए पूरा मिड डे मील खत्म हो गया। इस देश के करोड़ों बच्चों ने मिड डे मील में क्या खाया? इसकी रिपोर्टिंग किसने की? सिर्फ ग्रामीण और कस्बाई पत्रकारों ने।

आप सब जानते हैं कि गांवों में एक मवेशी बाजार होता है। जब आप आईएएस ट्रेनिंग में जाते हैं तो आपको एक सबक सिखाया जाता है कि जब कैटल मार्केट का दाम 30 परसेंट गिर जाता है तो इसका मतलब आपके जिले में कृषि संकट है। नोटबंदी के बाद मवेशियों के दाम 30 नहीं, 80 परसेंट गिरे। मवेशी के दाम जब बाजार में 80 परसेंट गिर गये तो उससे कसाई को नुकसान हुआ। आप उनको ही तो खत्म करना चाहते थे। वे खत्म हुए। लेकिन मवेशी बाजार के दलाल सब ओबीसी हैं। उनका भी धंधा साथ में खत्म हो गया। अब आप मवेशी को न बेच सकते हैं, न खरीद सकते हैं। खरीदने के लिए पैसा नहीं है, बेचने के लिए हिम्मत नहीं है।

आप मेक इन इंडिया की बात करते हैं। महाराष्ट्र में सौ साल पहले एक मेक इन इंडिया ब्रांड था- कोल्हापुरी चप्पल। उसे कौन बनाते हैं? दलित। चप्पल तो दलित ही बनाते हैं, और कौन? आज वे दिवालिया हो गये। आपने मुसलमान को दंडित करने के लिए जो किया, उससे आपने ओबीसी, मराठा, सारे उच्च वर्ण के किसानों को भी दंडित कर दिया। टाइम्स ऑफ इंडिया में एक रिपोर्ट आयी। एक आदमी के पास दस गायें थीं। वह मराठा किसान था। अकाल पड़ रहा था पांच साल से। उसने कहा- मैं अपने परिवार को खाना नहीं दे सकता हूं, दस गायों को कैसे दूं। रिपोर्टर ने उससे पूछा- आप इनको मार्केट में क्यों नही ले जा रहे? उसने कहा- हाइवे पर बजरंग दल, वीएचपी के लोग मुझे खत्म कर देंगे। तब आप क्या करेंगे? उसने कहा- मैं अपनी गायों को अपनी आंखों के सामने मरता देखूंगा। उधर उत्तराखण्ड में लोगों ने अपने मवेशियों को ले जाकर जंगल में छोड़ दिया। बाघों और तेंदुओं को इस तरह मुफ्त मीट आप दे रहे थे, इधर लोग भूखों मर रहे थे।

हर पांच साल पर देशव्यापी मवेशी-गणना की जाती है। 2017 की मवेशी-गणना अब तक नहीं की गयी है, जिसे 2016 में ही शुरू हो जाना था। 2018 की जनवरी में मैंने मंत्रालय से पूछा कि आपकी गणना अब तक शुरू भी नहीं हुई। मालूम है क्या जवाब दिया? साहब, इस साल हम लिख के नहीं कर रहे, टैबलेट पर कर रहे हैं। तो हजारों सरकारी कमर्चारियों को टैबलेट इस्तेमाल करने की ट्रेनिंग अभी चल रही है। इस तरह से तीन साल की देरी को जस्टिफाई किया गया।

मैं 1990 के दशक से इस गणना को देख रहा हूं। 2003 के सेंसस से मैं देख रहा हूं कि हर पांच साल पर उन मवेशियों की संख्या घट रही है, जिन्हें गरीब पालते हैं, जैसे ऊँट, सुअर, बकरी, भेड़। सबसे बड़ी गिरावट किसमें आयी है? देसी गाय में। ऐसा इसलिए, क्योंकि आपका वैज्ञानिक और कृषि प्रतिष्ठान, पशुपालन प्रतिष्ठान, सब संकर नस्ल की सर्विस ब्राउंन जर्सी को प्रमोट कर रहे हैं। इंडिया में एक और प्रजाति आयी है। करनाल में आप जाएंगे तो आपको लोग बताएंगे- आधा जर्सी। ये क्या चीज है? आधा जर्सी मतलब देसी गाय को जर्सी सांड़ के वीर्य से गाभिन बनाना। मेरी किताब में पहली कहानी इसी पर है।

2004 से 2006 तक विदर्भ का कृषि संकट चरम पर रहा। मैंने सरकार को ढेरों पत्र लिखे, इसके बावजूद राज्य और केंद्र सरकार ने सैकड़ों भैंस और विदेशी गायें किसानों में बांट दीं। क्योंकि विलासराव देशमुख कह रहे थे कि साईंनाथ तो पत्रकार है, मैं किसान हूं। ये अलग बात है कि वे कॉरपोरेट किसान थे। इनके लाभार्थी पूरी तरह दिवालिया हो गये। उस गाय को पालने के लिए कम से कम 300 रुपया प्रतिदिन चाहिए और हर हफ्ते में दो बार पशु चिकित्सक को भी बुलाना होता था। इस नस्ल की पैदाइश योरप के तापमान में हुई है, यवतमाल में 47 डिग्री में आप इसे रखेंगे तो क्या होगा? पहले छह महीने में ही 37 में से 20 गायें मर गईं। परिवार दिवालिया हो गये।

गांवों में जो नुकसान हुआ है वह कुदरती नहीं, हमारी आर्थिक नीतियों से हुआ है। यह जान बूझकर हुआ है। आपको मैं दो आंकड़े देता हूं। 1991 में नई आर्थिक नीति से पहले इस देश में एक भी डॉलर अरबपति नहीं था। फिर फोर्ब्स मैगजीन- जो ग्लोबल पूंजीवाद की पुजारी है- उसका 2000 में जो अंक आया, उसमें बताया गया कि डॉलर अरबपति भारत में 8 हो गए। फिर 2012 में 53 डॉलर अरबपति हो गए। 2018 में 121 डॉलर अरबपति इस देश में हो गए। आपकी जनसंख्या130 करोड़ से ज्यादा है, इसमें 121 आदमी (तीन चार महिलाएं भी है उनमें) की धन-दौलत का वैल्यू हिंदुस्तान की कुल जीडीपी का 22 परसेंट है। दुनिया में कोई भी समाज ऐसी असमानता पर टिका नहीं रह सकता।

2011 की जनगणना में पता चला कि इस देश के इतिहास में विभाजन के समय भी इतना बड़ा पलायन नहीं दिखा था। कोई नौकरी तो कोई छिटपुट काम के लिए गांव छोड़कर भाग रहा है, जबकि शहर में काम है ही नहीं। आपने एक रोजगार नहीं क्रिएट किया। जो किसान बनारस छोड़ कर जाते हैं, उनको लखनऊ में इंफोसिस में काम मिलेगा क्या? हां, मिल भी सकता है, लेकिन उसकी कैंटीन में चाय बांटने का काम। 1991 और 2011 सेंसस में देखिए, किसानों की आबादी 150 लाख गिर गयी। कहां गए ये किसान? सेंसस में एक और कॉलम में आप देख सकते हैं कि खेत मजदूरों की संख्या बढ़ रही है। मतलब जितनी जमीन गयी, जितने लोग खेती छोड़ गए, वे सब मजदूर बन गए। इसकी रिपोर्टिंग किसने की? उन ग्रामीण पत्रकारों ने, जो मेरे साथ घूमते हैं। वे ही दिखा सकते हैं आपको कि देश में दरअसल क्या हो रहा है।

थोड़ा सा संसद के बारे में भी बात करना चाहता हूं। 2004 में आप नया हलफनामा ले आये, जिसमें हर प्रत्याशी को खुद अपनी दौलत के बारे में उद्घाटन करना था। हमारे विधायक, सांसद कितने ईमानदार हैं! कोई आईटी रिटर्न उनसे नहीं लेगा, वे जो खुद बतायेंगे, वही चलेगा। इस हलफनामे के मुताबिक 2004 में निर्वाचित लोकसभा प्रत्याशियों में 32 प्रतिशत करोड़पति निकले। 2009 में यह बढ़कर 53 प्रतिशत हो गया। 2014 में 82 प्रतिशत करोड़पति लोकसभा में पहुंचे। इस बार सेल्फ डिक्लेयर्ड 88 प्रतिशत करोड़पति लोकसभा में हैं। यह एडीआर का आंकड़ा है।

मैने अरबपतियों और नरेगा मजदूरों की तुलना की है। कुल 121 अरबपतियों में नंबर वन कौन है? किसके पास इतना पैसा है कि दो और तीन नंबर वाले को मिलाकर भी उससे कम पड़ता है? उसका नाम है मुकेश भाई। मुकेश भाई ने 2017 में एक साल में 16.9 अरब डॉलर कमाया। रूपये में उस समय यह एक लाख पांच हजार करोड़ था। मैंने सोचा कि अगर मैं नरेगा मजदूर हूं तो मैं भी एक लाख पांच हजार करोड़ रुपया कमा सकता हूं? हां, लेकिन थोड़ा टाइम लगेगा इसमें। एक लाख 87 हजार साल लगेगा इतना पैसा कमाने में। या कहें, 187 लाख नरेगा मजदूर लगेंगे इतना पैसा एक साल में कमाने में।

यह संकट जितना बढ़ रहा है गांव में, उतना ही धन का संकेंद्रण बढ़ रहा है राजधानी में, मुंबई में। मुंबई हिंदुस्तान का सबसे अमीर शहर है। वहां से नब्बे किलोमीटर दूर ठाणे में भुखमरी से 17000 आदिवासियों की मौत हर साल होती है। 2017 में मुम्बई हाइकोर्ट के एक फैसले में यह सामने आया था। ये कुपोषण से जुड़ी मौतें थीं, सरकार ने माना था। जैसे जैसे यह असमानता बढ़ रही है, गांवों की जीवनशैली खराब हो रही है। इसकी रिपोर्टिंग एक बड़ी चुनौती है, जिसे ग्रामीण पत्रकार ही पूरा कर सकते हैं। जब आप इस तरह की चीजें रिपोर्ट करेंगे तो एक तो प्लेटफार्म की दिक्कत है कि इसे कौन छापेगा, दूसरा हमले की आशंका है। हमला केवल शारीरिक नहीं है, दूसरे किस्म का भी हो सकता है। जैसे दिल्ली में परंजय गुहा ठाकुरता ने जब गैस वार्स नाम की किताब लिखी थी रिलायंस पर तो रिलायंस ने उनको सौ करोड़ का नोटिस थमा दिया था। जब रिलायंस 100 करोड़ का नोटिस परंजय को देता है तो वह जानता है कि उसकी जेब में सौ रूपया भी शायद होगा, लेकिन रिलायंस को पैसा नहीं चाहिए। यह तो चेतावनी है बाकी पत्रकारों को, कि आप भी अगर ऐसा लिखेंगे तो आपको खत्म कर दिया जाएगा।

एक के बाद एक रैकेट है यहां। फसल बीमा योजना को लें, मैं बार बार कह रहा हूं कि यह राफेल घोटाले से भी बड़ा घोटाला है। राफेल का कितना है? 58000 करोड़।फसल बीमा में अब तक की कुल पब्लिक मनी है 86 हजार करोड़ और ये पैसा किसान को नहीं, बीमा कंपनियों को जा रहा है। चंडीगढ़ के ट्रिब्यून अखबार ने आरटीआई लगाया था इस पर। उसमें सामने आया कि पहले 24 महीने में जब 42000 करोड़ सेंटर और स्टेट का खर्च हुआ, तो 13 बीमा कंपनियों ने मिलकर 15,995 करोड रुपये का मुनाफा बनाया, यानी हर दिन का मुनाफा 21 करोड़ रूपये। जो बड़े बुद्धिजीवी हैं, वे सब कॉरपोरेट के लिए लिखते हैं। आप देखिए, 2014 में जब ये सरकार आयी तो इसने स्वामीनाथन कमीशन के हिसाब से एमएसपी (न्यूनतम समर्थन मूल्य) देने का वादा किया। साल भर के भीतर सुप्रीम कोर्ट में सरकार ने हलफनामा दे दिया कि वह यह नहीं कर सकती क्योंकि इससे बाजार मूल्य बिगड़ जाएगा।

पत्रकारिता में अभी दो स्कूल हैं- एक है पत्रकारिता, दूसरा स्टेनोग्राफी। अभी अखबार और चैनल में स्टेनोग्राफी कर रहे हैं सब। जो मालिक बोलता है, वे लिखते हैं। मैं पीपुल्स आर्काइव ऑफ रूरल इंडिया (परी) नाम की वेबसाइट तेरह भाषाओं में चला रहा हूं। बड़े-बड़े पत्रकार छद्म नाम से हमको लेख और फिल्में दे रहे हैं, क्योंकि उनके यहां वह छपने वाला नहीं है। मेरी सीनियरिटी के लोग मुझे लिख कर दे रहे हैं। वे भी एक जमाने में पत्रकारिता में अच्छा काम करने के लिए आए थे, समाज में सुधार करने के लिए आए थे। गांधी, आंबेडकर, भगत सिंह, सब इसी आदर्शवाद और समाज सुधार को लेकर पत्रकारिता में आए थे।

जिसे हम कृषि संकट कहते हैं, वह दरअसल समाज का संकट है। मिस्त्री, दर्जी, मोची, सारे संबद्ध पेशे खत्म हो रहे हैं। यह समाज का संकट भी नहीं है, यह सभ्यता का संकट है। हमारी सभ्यता छोटे किसान, छोटे मजदूर पर आधारित है। इसलिए यह सभ्यता का संकट है। जो आग कृषि में लगी है, वह मध्यवर्ग तक पहुंच चुकी है, तब भी हम आवाज नहीं उठाते हैं। तीन लाख 20 हजार किसान खुदकुशी कर चुके हैं और हम चुपचाप बैठे हैं।

इस संकट के बीच आखिर ग्रामीण पत्रकार अपना काम कैसे करे? मैं क्या सलाह दूं आपको? आप खुद ही अनुभव कर रहे हैं। यह संकट आपका है। दिक्कत यह है कि डिबेट नहीं हो रही है, संवाद नहीं हो रहा है। मैं परी में देशव्यापी रिपोर्टिंग प्रोजेक्ट कर रहा हूं। मुझको आश्चर्य लगता है कि जब हम एक्सपर्ट से बात करते हैं तो वे एक्सपर्ट भी आम लोगों के अनुभवों की ही पुष्टि कर रहे होते हैं। गरीब आदमी उनकी तरह शब्द भले इस्तेमाल नहीं कर सके, लेकिन गांव के लोग तापमान, मौसम आदि के बदलने का बेहतर अनुभव करते हैं। मछुआरे बेहतर जानते हैं कि तापमान, मौसम और जलवायु के बीच क्या अंतर है। दक्षिण एशिया में बुरी तरह मौसम का महासंकट आ रहा है। हिमालय के बंजारे, तमिलनाडु के मछुआरे, ये सब इसका विकल्प अपने स्तर पर खोज रहे हैं। तमिलनाडु के मछुआरों ने एक सामुदायिक रेडियो निकाला है 'साउंड ऑफ द वेव्स'। इससे वे अपने समुदाय को क्लाइमेंट चेंज के बारे में शिक्षित कर रहे हैं। केरल सबसे पहला राज्य है, जो समुद्र का जलस्तर बढ़ने से प्रभावित होगा। वहां रह रहे ग्रामीण अपने अनुभवों से जानते हैं कि क्लाइमेट चेंज में क्या हो रहा है। इसे केवल ग्रामीण पत्रकार ही रिपोर्ट कर सकता है, शहरी पत्रकार नहीं।

अगले साल दो लाख आईटी वर्कर बेरोजगार हो जाएंगे। 2018 में 70000 लोग आईटी सेक्टर से बेरोजगार हुए थे। मैं चाहता हूं कि आप लोग वह करें, जो हमने किया है। आप लोग सहकारी मॉडल पर वेबसाइट बनाइए। हम आपकी मदद करेंगे। परी आपकी मदद करेगा। एक जिले में आठ दस लोग मिल कर सहकारी वेबसाइट बनाइये। वेबसाइट चलाना अखबार से ज्यादा सस्ता है। अखबार में 70 परसेंट न्यूज़प्रिंट की ही लागत आ जाती है। आईटी सेक्टर में बहुत से आदर्शवादी बच्चे हैं, नौजवान हैं, जो इसको सेटअप करने में आपकी मदद करेंगे। दूसरा, सुरक्षा के लिए पत्रकारों का एक नेटवर्क बनाइये। उसको सपोर्ट कर के संगठन बनाइये। यूनियन को रिवाइव कीजिये। अगर कुछ होगा, जैसा पवन जायसवाल के साथ हुआ, तो देश के हर पत्रकार को 24 घंटे में उसका पता चलना चाहिए। वहां प्रोफेसर विजय प्रसाद के साथ मिलकर मैं भी सोच रहा हूं कि पत्रकार सुरक्षा पर एक साइट बनायी जाए, नेटवर्क खड़ा किया जाए। इससे समाधान तो नहीं होगा, लेकिन उसकी तरफ हम पहला कदम जरूर उठा सकते हैं। इतना ही मैं आपसे कहना चाहता था। ❑

धारावाहिक

बापू का उपवास

बा का ईश्वर से मौन संवाद

❑ गिरिराज किशोर

पहला गिरमिटिया जैसा चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। उनके बारे में उपलब्ध जानकारियां नहीं के बराबर हैं। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का अगला अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहा है। –सं.

जब डॉ. सुशीला नैयर को पता चला कि बापू उपवास का मन बना रहे हैं तो उसने डॉक्टर की हैसियत से समझाया, लेकिन बापू टस से मस नहीं हुए। यह तक कहा, 'आप बा के बारे में सोचिये, इतने नाजुक स्वास्थ्य के साथ क्या बा आपके लंबे उपवास पर जाने का तनाव सहन कर पायेंगी?'

'बा को जितना मैं जानता हूं, तुम लोगों में से कोई उसको उतना नहीं जानता।' बापू बोले, 'उसमें अद्‌भुत अंतःशक्ति है, जिसके बल पर वह तुम लोगों में से किसी से भी अधिक तनाव सहन कर सकती है। मैंने सहिष्णुता उससे ही सीखी है।'

उस समय तो उन्होंने यह कहकर उपवास की तात्कालिकता को स्थगित कर दिया कि वे ईश्वर से निर्देश लेकर ही उसका पालन करेंगे और उसके बाद एक सप्ताह तक प्रतिदिन आधा घंटा ध्यान में बैठने लगे। सब लोग उत्सुकता से ईश्वरीय आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे।

एक दिन दोपहर को सरोजनी नायडू ने बा से कहा, 'अच्छा हुआ कि बापू ईश्वर के आदेश का पालन करने के लिए तैयार हो गये। उनके स्वास्थ्य का ध्यान करके वह कभी उपवास पर जाने की अनुमति नहीं देगा।'

'मैं जानती हूं', बा बोली, 'इस बात को कभी न भूलना, बापू हर ईश्वरीय आदेश का पालन करेंगे।'

बापू के लिए ईश्वर से मंजूरी लेना मुश्किल नहीं था। लेकिन उन्हें बा की मंजूरी भी चाहिए थी। यह अधिकार बा ने अपने त्याग और समर्पण से अर्जित किया था, किसी ने दिया नहीं था। अपना निश्चय जाहिर करने से पहले बापू और बा लगभग घंटा भर कमरे में बंद रहे थे। बा के तर्क अकाट्य होते थे। जब किसी नतीजे पर नहीं पहुंच पाये तो अंत में बापू ने कहा, 'तू आज देश की स्वतंत्रता को प्यार करने वालों और उनके लिए बलिदान देने वालों की मां का स्थान पा चुकी है। एक ओर मेरा यह जर्जर शरीर है, दूसरी तरफ आजादी को प्यार करने वाले लाखों-करोड़ों जन की पुकार है। तू ही तय कर, तुझे देश की आजादी और इन बच्चों की आकांक्षा से प्यार है या यह जर्जर और क्षरणशील शरीर चाहिए?'

बा इस तर्क को सुनकर जैसे पत्थर हो गयी और बिना कुछ कहे कागज उठाकर बाहर चली गयी। उस कागज पर बापू ने अपने उपवास की घोषणा के बारे में लिखा था। बा पूरी तरह आश्वस्त हो गयी थी कि बापू के पास उपवास के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं है। उसी के द्वारा वे 'भारत छोड़ो' आंदोलन के विरुद्ध फैलाई जा रही अफवाहों का निराकरण कर सकते हैं और हिंसा फैलाने के आरोप का जवाब दे सकते हैं।

बापू और बा ने दिन साथ-साथ आरंभ किया। महादेव भाई की समाधि तक टहलने गये, परिक्रमा की। वहीं प्रार्थना की। बा मन ही मन बुदबुदाई, 'महादेव, आज पहली बार तेरे बिना, तेरे बापू उपवास करने जा रहे हैं...।' आंखें नम थीं। दोनों फूल अर्पित करके लौट आये। 10 फरवरी, 1943 को बापू का तीन सप्ताह का उपवास आरंभ हुआ। बा ने भी घोषणा की, सदा की तरह एक समय खाना खाकर बापू का सहयोग करेगी। सब चिन्तित हो उठे। बापू ने बा को समझाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। अंत में बा इस बात पर तैयार हुई कि दिन में दो बार फल और दूध ग्रहण करेगी, जिससे बापू की देखभाल सुचारु रूप से हो सके।

पहले दो-तीन दिन तो बापू चेतन रहे, तीसरे दिन कमजोरी महसूस होने लगी। छठे दिन हालत गिरनी शुरू हो गयी। फिर बिगड़ने लगी। बा दिन-भर उनकी खाट के पास बैठी रहती थी। बा ने नीबू की चंद बूंदें पानी में मिलाकर देने को कहा तो बापू ने मना कर दिया। उपवास दूसरे हफ्ते में पहुंचा, तब तक उपवास का समाचार आगा खां पैलेस के बाहर फैल चुका था। देश में लोग चिन्ताकुल हो उठे थे। महल के मुख्य द्वार पर लोगों की भीड़ बापू का हाल जानने के लिए जुटने लगी थी। वाइसराय की काउन्सिल के तीन ऐसे सदस्यों ने, जो बापू के विरुद्ध और सरकार के समर्थक होने के कारण नियुक्त किये गये थे, परिषद से यह कहकर त्याग-पत्र दे दिया कि महात्मा को तत्काल छोड़ा जाये। विश्व प्रसिद्ध नाटककार बर्नार्ड शॉ ने अपने वक्तव्य में कहा, 'राजा (किंग) को गांधी को तत्काल बिना शर्त मुक्त कर देना चाहिए और अपनी कैबिनट के बौद्धिक दिवालिएपन के लिए माफी मांगनी चाहिए।' दिल्ली सरकार पर किसी भी बात का

कोई असर नहीं पड़ रहा था। यहां तक कि वाइसराय लार्ड लिनलिथगो ने गांधी के उपवास को राजनीतिक 'ब्लैकमेलिंग' बतलाया था। चर्चिल ने कहा था, 'अगर उसकी (गांधी) यही जिद है तो मरे भूखा।'

इसका लाभ ये हुआ कि उसी समय जेल से छूटे बापू के दोनों पुत्रों, रामदास और देवदास को सरकार ने कुछ समय के लिए बापू के पास जाकर रहने की इजाजत दे दी। सरकार यह नहीं चाहती थी कि जनता इस भ्रम के कारण उत्पात मचाये कि बापू नहीं रहे। सैकड़ों आदमी प्रतिदिन बापू के कमरे के सामने से यह देखते हुए गुजरते थे कि बापू सो रहे हैं। वे इस बात से आश्वस्त होकर जाते थे कि उनकी सांस चल रही है। उनके अंदर न झुकने वाली आत्मा जाग्रत है। जो लोग वहां से गुजरते थे, बा सबको नमस्कार कर रही थी। बापू के लिए उनके मन में अटूट विश्वास था। तेरहवें दिन बापू की हालत तेजी से बिगड़ने लगी। दिल की धड़कन कमजोर पड़ने लगी। गुर्दे काम करना बंद कर रहे थे। डॉक्टरों ने अपनी दैनन्दिन रिपोर्ट में बताया कि अगर उपवास चलता रहा तो उनका जीवन आधी रात तक समाप्त हो सकता है।

अगले दिन बा सुबह से ही बापू के पास से हटकर तुलसी के बिरवे के सामने बैठकर प्रार्थना में लीन हो गयी। उनका चेहरा शांत था। वह बापू के सामने से गुजर रहे लोगों से बेखबर थी। डॉ. सुशीला और मीराबेन की आंखें बापू की हालत को देख बार-बार भर-भर आ रही थीं। बा का उस सर्वशक्तिमान से विश्वासभरा मौन संवाद देखकर विशेष रूप से डॉ. सुशीला अपने मेडिकल अनुभव के आधार पर, इस नतीजे को छू-छूकर लौट रही थी कि बा की प्रार्थना कोई चमत्कार कर दे, तो कर दे। एकाएक एक घटना घटी कि डॉक्टर ने बापू के कान के पास मुंह ले जाकर पूछा, 'क्या फलों का रस और पानी लेंगे?' उनकी पलकें हिलीं, निर्विकार ढंग से सिर हिला दिया। सुशीला तत्काल रसोई की तरफ दौड़ी और दो औंस रस, चार औंस पानी मिलाकर लाने के लिए कहकर तुरंत बापू के पास लौट आयी। रस आ गया तो बापू ने शनैः शनैः पिया। बा आश्वस्त और शांत भाव से लौटीं और कहा, 'बापू हमें छोड़कर नहीं जायेंगे।' आश्चर्य यह है कि उस समय बा को यह पता नहीं था कि बापू ने रस लेकर अनशन समाप्त कर दिया है।

आगाखां पैलेस में दो मुस्लिम सिपाही थे। बा उनके साथ अपनेपन का व्यवहार करती थी। रसोईघर का काम भी लेती थी। ईद और अन्य त्यौहारों पर मिठाई आदि भी देती थी। हिन्दू-मुसलमान का भेदभाव नहीं था। लेकिन कभी इतिहास पढ़ती थी तो मुस्लिम शासकों द्वारा किये गये अत्याचारों के बारे में जानकर बेचैन हो जाती थी। लेकिन फिर डॉ. अंसारी, हकीम अजमल खां, खान अब्दुल गफ्फार खां, उनके भाई डॉ. खान साहब, मौलाना अबुल कलाम आजाद जैसे मित्रों को देखकर उनके मन ही मन सवाल उठता था कि इतिहास में यह सब क्यों है? सेवाग्राम में कार्यकारिणी आदि की बैठकें होती थीं तो उनमें काफी लोग सम्मिलित होने आते थे। बा चबूतरे पर अपना दरबार लगाये रहती थी। सब लोग बा को सलाम या नमस्कार करते जाते थे। उन्हें याद रहता था कि किसको क्या पसंद है। पं. नेहरू और मौलाना साहब को चाय पसंद थी। उनकी चाय बनाने का काम मीराबेन का था। राजगोपालाचारी कॉफी पीते थे। कॉफी सुशीला बनाती थी। खान अब्दुल गफ्फार खां के लिए बा अपने आप जाकर तश्तरी में गुड़ लाती थी। हकीम साहब पान खाते थे, उनके लिए पान मंगाकर रखती थी। हर व्यक्ति के लिए खातिर का सामान तैयार रहता था। बल्लभ भाई पटेल और जमनालाल बजाज के साथ उनकी गहरी आत्मीयता थी। उनके पास समय होता था तो बा घर बाहर की सब बातें उनसे कर लेती थी।

अगर कोई हिन्दू-मुसलमान की एकता के विरुद्ध बात करता था तो बा को अच्छा नहीं लगता था। एक रोज बा ने किसी का वक्तव्य पढ़ा कि गांधी और जिन्ना आपस में मिलना पसंद नहीं करते। बा नाराजगी से बोली, 'यह झूठ है, गांधी तो जिन्ना के घर उनसे मिलने गये थे। महादेव ने लिख के रखा हुआ है। मेरे सामने आकर कोई कहे तो मैं लिखा हुआ दिखा दूंगी। पूछूंगी कि बताओ गांधी जिन्ना से मिलने उनके घर गये थे या नहीं?'

बापू की आलोचना पढ़कर बा दुखी होकर कहती थी, 'देखो, लोग कितना झूठ बोलते हैं'! विशेष रूप से जब कोई बापू की अहिंसा पर हमला करता था तो बा से सहा नहीं जाता था।

बा दक्षिण अफ्रीका में जेल जा चुकी थी। वहां कष्ट भी बहुत भोगे थे। भारत में तो अनेक बार जेल गयी थी। 1931-33 के बीच तो तीन बार जेल गयी थी। लेकिन इस बार बा को लगता था कि उन्हें गलत पकड़ा गया है। अखबार में जनता पर हो रहे अत्याचार पढ़कर दुख होता था। इसी तरह उन लोगों में भी बहुतों को बिना कारण बंदी बनाया जाता होगा। 18 अगस्त 1942 की बात है, चर्चा चल रही थी कि बाहर जाकर कौन क्या करेगा? बा के मुंह से अनायास निकल पड़ा, 'मेरा क्या पता मैं बाहर जाऊं भी या न जाऊं। हो सकता है मैं अभी हूं, शाम तक न रहूं।' बापू सुन रहे थे। बोले, 'ऐसी निराशा भरी बात क्यों कहती है? तू अब कस्तूरबा है, सबको राह दिखाने वाली मां। वैसे यह बात तो किसी पर भी लागू हो सकती है। यह सुशीला बैठी है, अभी एम. डी. किया है, हो सकता है शाम को न रहे। महादेव के साथ क्या हुआ, टहलकर आया और चला गया। मैं और तुम बीमार थे, लेकिन अभी भी बैठे हैं। तुझे तो अच्छा होना ही है। जितनी सेवा लेनी है, हम लोगों से ले ले। मन से चिन्ता निकाल दे।'

पर बा की चिन्ता कम होने वाली नहीं थी। एक दिन कहने लगी, 'बापू जी इतनी बड़ी हुकूमत से लड़ रहे हैं, उसके पास तो अथाह संसाधन हैं। बापू जी कैसे जीतेंगे?'

सुशीला ने समझाते हुए कहा, 'बा, ईश्वर तो है ना? बापू ने उसके और जन के भरोसे लड़ाई ठानी है। जन पीछे से संभाल रहा, ईश्वर ऊपर से...।'

'वह भी लगता है, हमारे विरुद्ध जा रहा है। देख, महादेव को हमसे कैसे छीन लिया। बापू अकेले पड़ गये।' बा ने दुःखी होकर कहा। महादेव का अचानक चले जाना उन्हें कुरेदता रहता था।

बापू चुप थे। इस बात पर बोले, 'महादेव का जाना शुद्ध बलिदान था। उसका बलिदान आजादी के संघर्ष को बल देगा।'

...क्रमशः अगले अंक में

लोक-विमर्श

महिलाओं के खिलाफ अपराध बढ़े, फिर भी 'निर्भया फंड' की अनदेखी

हैदराबाद और उन्नाव में घटी बलत्कार और मर्डर की घटनाओं से इस वक्त देशभर में रोष है. हैदराबाद में तो जो हुआ वह सब रात के अंधेरे में हुआ, लेकिन उन्नाव में जो हुआ वह दिन दहाड़े हुआ। जिस लड़की के साथ बलात्कार के आरोप में लड़के जेल में थे, जमानत पर छूटकर उन्होंने उसी लड़की को खुलेआम सड़क पर जला डाला। खोखली हो चुकी व्यवस्था का निकम्मापन कोई छिपी हुई बात नहीं है। ऐसी घटनाएं पूरे देश में हो रही हैं और हर रोज हो रही हैं। बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ का नारा देने वाली सरकारें, अपने दावों और वादों के विपरीत व्यवहार किस प्रकार करती हैं, यह रिपोर्ट उसका ताजातरीन उदाहरण है।

दिल्ली में 2012 में हुए जघन्य निर्भया गैंगरेप केस के बाद सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा के लिए समर्पित एक विशेष फंड की घोषणा की थी, जिसका नाम 'निर्भया फंड' रखा गया था. केंद्र सरकार की तरफ से महिला सुरक्षा के लिए गठित निर्भया फंड के पैसे खर्च करने में सभी राज्य नाकाम रहे हैं और कुछ राज्यों ने तो एक पैसा भी खर्च नहीं किया है.

लोकसभा में निर्भया कोष के आवंटन के संबंध में सरकार ने जो आंकड़े दिए हैं, उनके मुताबिक आवंटित धनराशि में से 11 राज्यों ने एक पैसा भी खर्च नहीं किया है. इन राज्यों में महाराष्ट्र, मणिपुर, मेघालय, सिक्किम, त्रिपुरा के अलावा दमन और दीव शामिल हैं.

दिल्ली ने 390.90 करोड़ रूपये में सिर्फ 19.41 करोड़ रूपये खर्च किए. उत्तर प्रदेश ने निर्भया फंड के तहत आवंटित 119 करोड़ रूपये में से सिर्फ 3.93 करोड़ रूपये खर्च किए. कर्नाटक ने 191.72 करोड़ रूपये में से, केवल 13.62 करोड़ रूपये, तेलंगाना ने 103 करोड़ रूपये में से केवल 4.19 करोड़ रूपये खर्च किए. आंध्र प्रदेश ने 20.85 करोड़ में से केवल 8.14 करोड़ रूपये, बिहार ने 22.58 करोड़ रूपये में से मात्र 7.02 करोड़ रूपये खर्च किए.

गुजरात ने निर्भया फंड के तहत आवंटित 70.04 करोड़ रूपये में से 1.18 करोड़ रूपये, मध्य प्रदेश ने 43.16 करोड़ रूपये में से 6.39 करोड़ रूपये, तमिलनाडु ने 190.68 करोड़ रूपये में से 6 करोड़ रूपये, पश्चिम बंगाल ने 75.70 करोड़ रूपये में से 3.92 करोड़ रूपये खर्च किए.

संसद में पेश आंकड़ों के मुताबिक, महिला और बाल विकास मंत्रालय से जुड़ी योजनाओं के लिए 36 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को महिला हेल्पलाइन, वन स्टॉप सेंटर स्कीम सहित कई योजनाओं के लिए पैसा आवंटित किया गया था. दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, झारखंड, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, दादरा नगर हवेली और गोवा जैसे राज्यों को महिला हेल्पलाइन के लिए दिए गए पैसे जस के तस पड़े हैं. वन स्टॉप स्कीम के तहत बिहार, दिल्ली, कर्नाटक, लक्षद्वीप, पुडुचेरी, पश्चिम बंगाल ने एक पैसा खर्च नहीं किया. महिला पुलिस स्वयंसेवक योजना के लिए आवंटित राशि में अंडमान निकोबार, झारखंड, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा और उत्तराखंड ने कोई राशि खर्च नहीं की.

न्याय विभाग की तरफ से 11 राज्यों को दिए गए फंड में से किसी भी राज्य ने एक पैसा खर्च नहीं किया. न्याय विभाग ने निर्भया कोष के तहत परियोजनाओं को आगे बढ़ाने के लिए झारखंड, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, नगालैंड, ओड़िशा, राजस्थान, त्रिपुरा और उत्तराखंड को पैसे आवंटित किए थे.

लोकसभा में एक सवाल के लिखित जवाब में महिला और बाल विकास मंत्री ने राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों को पेश किया, जो महिलाओं के खिलाफ आपराधिक घटनाओं में बढ़ोत्तरी को स्पष्ट करते हैं. इन अपराधों में बलात्कार, घरेलू हिंसा, मारपीट, दहेज प्रताड़ना, एसिड हमला, अपहरण, मानव तस्करी, साइबर अपराध और कार्यस्थल पर उत्पीड़न आदि शामिल हैं.

एनसीआरबी के आंकड़ों के मुताबिक, साल 2015 में महिलाओं के खिलाफ अपराध के 3.29 लाख मामले दर्ज किए गए. 2016 में इस आंकड़े में 9,711 की बढ़ोतरी हुई और इस दौरान 3.38 लाख मामले दर्ज किए गए. इसके बाद 2017 में 3.60 लाख मामले दर्ज किए गए. –(द क्विंट)

उन्नाव जिला सर्वोदय मंडल द्वारा गांधी चर्चा का आयोजन

जिला सर्वोदय मंडल, उन्नाव द्वारा गांधी चर्चा का आयोजन मैचलेस विद्या मंदिर इण्टर कालेज, उन्नाव में किया गया। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए सर्वोदय मण्डल के जिलाध्यक्ष नसीर अहमद ने कहा कि दलित वर्ग के हितों की अगर आजादी के आंदोलन के दौरान किसी नेता ने सुरक्षा की तो वह महात्मा गांधी थे। गांधीजी के प्रयासों से ही 1932 में पूना पैक्ट हुआ। सर्वोदय मण्डल के महामंत्री संजीव श्रीवास्तव ने कहा कि तत्कालीन स्वतंत्रता आंदोलन के राष्ट्रीय नेता जो कांग्रेस का नेतृत्व कर रहे थे, उन्होने बंटवारे के मुद्दे पर गांधीजी की उपेक्षा की तथा उनकी सहमति के बिना भारत के विभाजन के दस्तावेज पर हस्ताक्षर किये। उन्होंने कहा कि आज गांधी जी के विचारों को अधिक से अधिक युवा पीढ़ी में प्रसारित करने की आवश्यकता है। इस मौके पर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के संगठन मंत्री रघुराज सिंह 'मगन' ने कहा कि हत्यारे नाथूराम गोडसे ने 30 जनवरी के पहले गांधीजी की हत्या का बार प्रयास किया था। तब देश का विभाजन भी नहीं हुआ था। तब यह कैसे कहा जाये कि गांधी जी की हत्या 55 करोड़ रूपये पाकिस्तान को दिये जाने और विभाजन के कारण हुई थी। कार्यक्रम में रजनी कुशवाहा, ईशा यादव, अंशिका मिश्रा, निष्ठा गुप्ता, काजल सक्सेना, सुमन पाल, अल्शिफा बानो, श्रेहा सिंह, आरती शर्मा, लक्ष्मी गौतम, नेहा शर्मा आदि छात्राओं ने गांधीजी के व्यक्तिव के बारे में कई सवाल पूछे, जिनका पदाधिकारियों ने जवाब देकर बच्चों को संतुष्ट किया। इस मौके पर विद्यालय के प्रबन्धक देवी प्रसाद साहू, प्रधानाचार्य रामप्रकाश साहू, अध्यापक बीरेन्द्र सिंह व पंकज पटेल उपस्थित रहे। समारोह का संचालन रघुराज सिंह मगन ने किया। –संजीव श्रीवास्तव

केशव शरण की कविताएं

आज फिर एक बलात्कार

शेर
किस हद तक बुरा हो सकता है
किस हद तक भेड़िया
जानती है दुनिया

दुनिया नहीं जानती
किस हद तक बुरा हो सकता है
आदमी

जबकि भुक्तभोगी है वह
आज की नहीं
सनातन काल से

आज फिर एक बलात्कार
हद पार
उसके साथ !

फिर न आने वाले के लिए

खोना होता है
इसलिए रोना होता है
छाती पीट.पीटकर
पटक.पटककर माथा
फाड़कर बुक्का, बिलख-बिलखकर

फिर न आने वाले के लिए

खोना होता है
लेकिन उतना नहीं रोना होता है
लम्बी यादें दे जाने वाले के लिए

जितना
अपने साथ
सब संभावनाएं ले जाने वाले के लिए

यह अपूरणीय है
अपार पीड़ा से भरा

बाप रोता
मां रोती
इस साल वह
किस क्लास में होता
इस साल वह
किस क्लास में होती
गर्मी की छुट्टियां बिताकर
लीची के देस में

लीची के देस में
परिवार टूट रहे हैं
बेहाल होकर
अपने नौनिहाल खोकर

क्या करेंगे वे रोकर
लेकिन रोना होता है
जब जिगर के टुकड़े को खोना होता है

उनकी रोती हुई तस्वीरें
आज किसका न दिल चीरें
माननीय स्वास्थ्य मंत्री जी !

सिक्स लेन की सड़कें

सिक्स लेन की
सड़कों के ऊपर से
गुज़र गए बादल
निकल गये जनपद से बाहर
बिन बरसे

वही सिक्स लेन सड़कें
जिनके लिए हज़ारों पेड़
हलाक हुए
और हो रहे हैं

इसी सिक्स लेन की
एक लेन में
प्रचंड धूप
और गर्मी से
चलती हुई कार
बन गयी जलती हुई कार
तो किसी तरह
बाहर निकलकर
रो रहे हैं
कार सवार
स्त्री-पुरुष, दो बच्चे
बिना छांव के
दूर गांव के
देखते हुए
निज नयी जलती हुई कार

सत्य-झूठ

उसने सत्य का सहारा लिया
मुझे बरगलाने के लिए
और मैं बरगला गया

अब उसे सत्य की ज़रूरत नहीं है
लेकिन मुझे बराबर बरगलाते रहने की
ज़रूरत है उसे
जिसके लिए वह
अब बराबर झूठ का सहारा ले रहा है
जो इससे स्पष्ट है कि
उसने तरसों क्या कहा था
उसने नरसों क्या कहा था
उसने परसों क्या कहा था
उसने कल क्या कहा था
और उसने आज क्या कहा है !

आम आदमी

अच्छा हुआ कि
मैं शासक नहीं हुआ
कि जनता की मुसीबतें
और पूंजीपतियों की सहूलियतें बढ़ाऊं

अच्छा हुआ कि
मैं पूंजीपति नहीं हुआ
कि जंगल को नोचूं
पहाड़ को चोथूं
और ख़ून पीऊं
कामगारों का

अच्छा हुआ कि
मैं सिपाही भी नहीं हुआ
कि शासक और पूंजीपति के खिलाफ़ खड़ी
जनता को भून दूं गोलियों से

अच्छा है कि
मैं आम आदमी हूं
जनता के बीच खड़ा
भले गोलियों से भून
दिये जाने के लिए ❑

'Sarvodaya Jagat' Hindi Fortnightly
Registered under RNI No. 35495/78, Postal Registration No. VSI-(E) 04, Valid upto 31 December 2020
Issued by S.S.P.O. Varanasi (East Division)

धर्म क्या कहता है

(धर्मों की फुलवारी)

मनुष्य को मनुष्य से मिलाने वाली चीज का नाम है–'धर्म'। दिलों को दिलों से जोड़ने वाली इस चीज की बुनियाद है–सत्य, प्रेम और करुणा। विश्व के सभी प्रसिद्ध धर्म इसी आधारशिला पर खड़े हैं। परंतु कठिनाई यह आ रही है कि हमने मूल को तो छोड़ दिया है, पत्तों को पकड़ कर बैठ गये हैं, बाहर की छोटी-छोटी बातों को लेकर हम आपस में आये दिन लड़ते-झगड़ते रहते हैं।

'धर्म क्या कहता है?' इस पुस्तकमाला की 13 पुस्तकों में यह बताया गया है कि धर्म का वास्तविक लक्ष्य और उद्देश्य क्या है? इन पुस्तकों में संसार के सभी प्रसिद्ध धर्मों–वैदिक धर्म (3 भाग), जैन धर्म, बौद्ध धर्म, पारसी धर्म, यहूदी धर्म, ताओ धर्म, कनफ्यूशस धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म, सिख धर्म और बहाई धर्म का सरल विवेचन करते हुए यह समझाया गया है कि सच्चा धर्म क्या है और धर्म में किस बात पर सबसे ज्यादा जोर दिया गया है।

भारत सरकार द्वारा 'धर्म क्या कहता है?' पुस्तकमाला की पहली पुस्तक–'धर्मों की फुलवारी' को नवसाक्षरों के लिए साहित्य की दसवीं पुरस्कार-प्रतियोगिता के अंतर्गत सन् 1964 में पुरस्कृत किया जा चुका है। फरवरी, 1965 में 'धर्महरूको फुलवारी' नाम से इसका नेपाली अनुवाद भी प्रकाशित किया गया था। वैदिक धर्म (3 भाग) का भी नेपाली अनुवाद प्रकाशित किया गया है। तमिल भाषा में भी पूरी पुस्तक माला का अनुवाद प्रकाशित हुआ है, और कन्नड़ में भी।

हम मानते हैं कि इस पुस्तकमाला को पढ़कर भिन्न-भिन्न धर्मों को मानने वाले लोग एक-दूसरे के निकट आयेंगे और दिन-प्रतिदिन सच्चे मानव-धर्म की ओर बढ़ेंगे। तभी धर्म का सच्चा उद्देश्य पूरा हो सकेगा। राष्ट्रीय एकता की वृद्धि के लिए इस पुस्तकमाला का घर-घर में प्रसार होना चाहिए। सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी ने यह पुस्तकमाला कुल तेरह खंडों में प्रकाशित की है। आपके क्रयादेश पर पूरा सेट 230 रुपये (डाक खर्च सहित) में उपलब्ध कराया जायेगा। अपना क्रयादेश सर्व सेवा संघ प्रकाशन के नाम भेजें।

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार।